संस्थापित १८६७ ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ २,५००
वार्षिक शुल्क ₹ २००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ ५.००

● वर्ष : १२६ ● : संयुक्तांक ०२ एवं ०३ ● ११ एवं १८ जनवरी, २०२४ (गुरुवार) पौष शुक्लपक्ष अष्टमी सम्वत् २०८० ● दयानन्दाब्द १६६ वेद व मानव सृष्टि सम्वत्: १६६०८५३१२४

वाल्मीकि के राम

–सूर्यदेव चौधरी

वैदिक धर्म के दो देदीप्यमान नक्षत्रों में एक मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम हैं। श्री राम के बारे में जानकारी के लिए हमारे पास मुख्य रूप से दो ग्रंथ हैं- पहला वाल्मीकीय रामायण एवं दूसरा तुलसीकृत रामचरितमानस। तुलसीदास आज से लगभग साढ़े चार सौ वर्ष पूर्व हुए थे। उन्होंने श्रीराम को ईश्वर के अवतार के रूप में चित्रित किया है और श्रीराम का यही रूप आज आम जनता में प्रचलित है क्योंकि भाषायी सुविधा के कारण रामचरित मानस की पहुँच जन-जन में है। लेकिन वाल्मीकि के राम क्या थे? इस बारे में आम जनता अनभिज्ञ है। इसके दो कारण है- पहला वाल्मीकीय रामायण मूलतः संस्कृत में है और दूसरा कारण स्वाध्याय के प्रति लोगों की अरुचि एवं उदासीनता है। हालाँकि वाल्मीकीय रामायण का हिन्दी अनुवाद सुलभ है, लेकिन स्वाध्याय के अभाव में वाल्मीकीय रामायण के सच से लोग अपरिचित बने हुए हैं। प्रस्तुत निबंध में हम देखेंगे कि वाल्मीकि के राम क्या थे-ईश्वर के अवतार या मनुष्य? वाल्मीकि की प्रतिज्ञा- वाल्मीकीय रामायण के प्रथम सर्ग में ही ऋषि वाल्मीकि की प्रतिज्ञा इस प्रकार मिलती है-

इदं पवित्रं पापघ्नं पुण्यं वेदैश्च सम्मतम्। (बाल० १/६८)

अर्थात् यह रामायण पवित्र, पापनाशक, पुण्यदायक और वेद के अनुकूल है। स्पष्ट है कि वाल्मीकि जी ने रामायण को वेद-सम्मत कहा है। इसका अर्थ यह हुआ कि यह रामायण वेद के प्रतिकूल नहीं होगा। अब हम देखते हैं कि वेद का मत क्या है? यजुर्वेद (३२/३) में कहा गया है कि 'न तस्य प्रतिमा अस्ति, अर्थात् ईश्वर की मूर्ति नहीं है। यजुर्वेद (४०/८) में ईश्वर को 'अकायमव्रणमस्नाविरं' कहा गया है अर्थात् ईश्वर शरीर, व्रण एवं नस-नाड़ी के बंधन से रहित है। इसके साथ वेदों में स्थान-स्थान पर ईश्वर को अजन्मा कहा गया है। वेद के उपरोक्त प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि ईश्वर अवतार नहीं लेता है, क्योंकि वैसी स्थिति में ईश्वर की मूर्ति भी होगी और नस-नाड़ी के बंधन भी, जो वेद के प्रतिकल होगा। तात्पर्य यह कि वेद-मत में ईश्वर का अवतार नहीं होता है। चूँकि वाल्मीकि की प्रतिज्ञा के अनुसार रामायण वेद-सम्मत है, अतः वाल्मीकि के राम ईश्वर के अवतार नहीं हो सकते क्योंकि श्रीराम में ईश्वर के वैदिक लक्षणों के विरुद्ध लक्षण मिलते हैं। अस्तु वाल्मीकि की प्रतिज्ञा के अनुसार श्रीराम मनुष्य सिद्ध होते हैं।

नारद-वाल्मीकि संवाद- वाल्मीकीय रामायण के प्रारम्भ में नारद-वाल्मीकि संवाद है। वाल्मीकि जी नारद से पूछते हैं कि इस समय लोक में गुणवान् वीर्यवान, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवचन में दृढ़व्रती, चरित्रवान, सभी प्राणियों के हित में रत, विद्वान, सामर्थ्यवान, प्रियदर्शी, आत्मवान्, कोधजित्, द्युतिमान दूसरे की निंदा न करनेवाला, युद्ध में उत्पन्न क्रोध से देवताओं को भी डराने-वाला कौन है। इसी क्रम में ऋषि वाल्मीकि का नारदजी से अन्तिम प्रश्न इस इस प्रकार है-

एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं परं कौतूहलं हि मे।
महर्षे त्वं समर्थोऽसि ज्ञातुमेवंविधं नरम्।। बाल (१/५)

अर्थात् इसको सुनने का कौतूहल मेरे मन में है। हे महर्षे ऐसे मनुष्य को तुम जानने में सर्वविधि समर्थ हो।

इन प्रश्नों का उत्तर नारद जी

क्रमशः.....६ पर

वेदामृतम्

एको बहूनामसि मन्यवीळितो, विशं विशं युधये संशिशाधि।
प्रकृत्तरुक् त्वया युजा वयं, द्युमन्तं घोषं विजयाय कृण्म हे।।

ऋ० १०.८४.४

हे मन्युमान् राजन् ! तुम अकेले बहुत-सी प्रजाओं के स्तुतिपात्र बनते हो। राष्ट्र में सम्पादित किये गये तुम्हारे सत्कर्मों से रीझकर अनेक राष्ट्रवासी तुम्हारा यशोगान करते हैं तुम्हारा अभिनन्दन करते हैं, तुम्हें बधाई देते हैं। हे राष्ट्र के उन्नायक ! राष्ट्र को संकट से बचाने के लिए तुम राष्ट्र में सैनिक शिक्षा को अनिवार्य कर दो, एक-एक प्रजा को युद्ध के लिए संतीक्ष्ण करो। तुम भी अच्छिन्न दीप्तिवाले बनो, जिससे तुम सहायक को पाकर हम विजय के लिए देदीप्यमान, गगनभेदी विजयघोष आकाश में गुंजा दें। इस प्रकार हम विजयी हों, और हमारे राष्ट्र की विजय-पताका सज-धज के साथ आकाश में फहराती रहे।

इसके अतिरिक्त हमें अपने आन्तरिक राष्ट्र को भी विजयी बनाना है। है मन्युमान् परमात्मन् ! तुम हमारे अध्यात्म-राष्ट्र के राष्ट्रपति हो। तुम एक हो, तुम्हारे समकक्ष कोई अन्य नहीं है, अतएव तुम अनेकों से स्तुति पाते हो, अनेकों के पूजापात्र बनते हो, अनेकों साधक तुम्हारा कीर्तिगान करते हैं। हैं भगवन! हमारे अध्यात्म-राज्य में युद्ध का संकट उपस्थित हो गया है। पाशवी वृत्तियां दैवी वृत्तियों को दबाना चाह रही हैं। इस निकट घड़ी में यदि तुम हमारे अन्दर की मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि प्रत्येक प्रजा को बुद्ध में शिक्षित नहीं करोगे, तो हम निश्चय ही घराशायी हो जायेंगे। अतः शरीर की प्रत्येक प्रजा को, शरीर के अंग-अंग को, तुम प्रचण्ड योद्धा बना दो संग्राम- कुशल कर दो। हे प्रभु ! तुम 'अकृत्तरुक' हो, अखण्ड ज्योतिवाले हो, अध्यात्म-संग्राम में तुम हमारे सहायक बनो। तुम सच्चे सहायक को पाकर हम फूले नहीं समायेंगे। हमारी दैवी सेना आसुरी सेना को समाप्त करने के लिए कटिबद्ध हो जायेगी और ऐसा उच्च विजय-घोष करेगी कि असुर सैनिकों के दिल बैठ जायेंगे, वे हतोत्साह होकर चीत्कार करते हुए रणभूमि में ही गिरकर सदा के लिए सो जायेंगे। हमारी देवी सेना विजयी होगी. अध्यात्म-राज्य निष्कंटक होकर विकसित होगा, फूले-फलेगा। एक दिन आयेगा जब सारा विश्व अध्यात्म-राष्ट्र बन जायेगा। हे मन्युमान् जगदीश्वर! वह दिन शीघ्र लाओ।

साभार-वेदमंजरी

ओ३म्

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का 200वाँ

चलो टंकारा
चलो टंकारा

जन्मोत्सव-स्मरणोत्सव

10-11-12 फरवरी, 2024

राजकोट-मोरबी हाईवे, टंकारा, गुजरात

मुख्य अतिथि

भारत की महामहिम राष्ट्रपति

श्रीमती द्रौपदी मुर्मु जी

सोमवार, 12 फरवरी 2024

समस्त राष्ट्र की ओर से स्मरण

हार्दिक अभिनन्दन

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान

पंकज जायसवाल
मंत्री

आर्य प्रतिनिधि सभा, उ.प्र.

विशेष- महर्षि के जन्मोत्सव/स्मरणोत्सव के शुभारम्भ हेतु दि. १० फरवरी, २०२४ को उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री माननीय योगी आदित्यनाथ जी को भी आमंत्रित किया गया है।

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान/संरक्षक

पंकज जायसवाल
मंत्री/सम्पादक

आर्य शिवशंकर वैश्य
प्रबन्ध सम्पादक

सम्पादकीय.....

राष्ट्र पुरुष राम

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम जी का पवित्र जीवन चरित्र आज लाखों वर्षो के बाद भी जन मानस को प्रेरित कर मार्ग दर्शन कर रहा है। उसका मुख्य कारण श्रीराम का वैदिक मर्यादित सम्पूर्ण जीवन। श्रीराम के बचपन से लेकर जीवन पर्यन्त उनके जीवन का अवलोकन करने से पता चलता है कि कहीं भी उन्होंने मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया। वह चाहे उनका विद्यार्थी जीवन हो, गृहस्थ हो चाहे प्रशासक का हो, क्षत्रिय हो, चाहे पिता-पुत्र, पति-पत्नी, स्वामी-सेवक, गुरू-शिष्य या चाहे भ्रातृ रूप हो, सर्वत्र एक नियमित आदर्श जीवन परिलक्षित होता है, जिसके कारण ही श्री राम के नाम के साथ मर्यादा पुरुषोत्तम नाम जुड़ गया है। जो उनके पवित्र जीवन का परिचय देता है।

महर्षि वाल्मीकि द्वारा नारद मुनि (वा.रामा.बाल.१/२/४) से जब यह पूछा गया कि इस मृत्यु लोक में कौन ऐसा महापुरुष है जो पराक्रमी, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, दृढ़व्रती, सच्चरित्र, परोपकारी, विद्वान, शक्तिमान, जितेन्द्रीय, समदर्शी तथा अकुतोभय आदि गुणों से युक्त है। इसके उत्तर में नारद मुनि ने इश्वाकुवंशीय राजा दशरथ के पुत्र श्रीराम के गुणों का वर्णन करते हुए कहा था कि (वा.रामा.बाल. १/८/१६) श्रीराम साक्षात् धर्मावतार, तपस्वी, त्यागी, जितेन्द्रिय, समुन्द्र के समान गम्भीर विष्णु के समान पराक्रमी, हिमालय के समान धैर्यवान, धर्म के रक्षक, वेद-वेदांगों के ज्ञाता, धनुर्विद्या में पारंगत, सत्यवादी सबके प्रति समान भाव, हृष्ट-पुष्ट, प्रजा रक्षक, सज्जनों के प्रिय, शत्रुओं का मर्दन करने वाले आर्य पुरुष हैं।

श्रीराम के पावन गुणों से प्रेरित होकर आर्य जगत के प्रसिद्ध कवि श्री राधेश्याम एड. लिखते हैं-

राष्ट्र-पुरुष थे, विश्वविजेता मर्यादा-पुरुषोत्तम,
महामनुज थे, सत्यं-शिवं-सुन्दरम् से भी सुन्दरतम्।
रविकुल के रवि बनकर तुमने,
नष्ट किया था भूतल तम्।
युग स्रष्टा! हे युग परिवर्तक,
तुम उत्तम से भी उत्तम्,
आर्य पुत्र ! हे वेद पथिक।
भारत सुत! हे दशरथ नन्दन!
राम तुम्हारा शत शत अभिनन्दन।।

भगवान राम मर्यादा पालन के गुणों के कारण ही आज सारे विश्व में, विशेष कर आर्य जाति में पूज्य व सर्वप्रिय हैं। उसी का प्रभाव है कि लोग जब मिलते हैं, तो राम-राम, मिलकर चलते समय राम-राम। यहाँ तक अन्तिम समय की यात्रा में भी राम नाम सत्य है, कहकर शव यात्रा निकालते हैं, अर्थात् राम, सत्य के पर्याय हैं, सदैव सत्य का ही पालन किया। तभी तो राम आज लाखों वर्षों के बाद भी लोगों के हृदय में रचे-बसे हैं।

आज लगभग पाँच सौ वर्षों बाद श्री राम जन्म स्थान अयोध्या में उनकी प्रतिमा की स्थापना होने जा रही है। यह हर भारतवासी के लिए बड़े हर्ष व गौरव की बात है। इसके मूल कारण को यदि हम देखें तो हिन्दुओं की अकर्मण्यता, आपसी फूट व जड़ पूजा आदि है। श्री राम की सच्ची पूजा उनके आदर्श, मर्यादा और धर्माचरण आदि गुणों को अपने जीवन में उतारना है। यदि राम के शौर्य, पराक्रम जैसे गुणों को हम धारण करते तो यह ५०० वर्षो की पराधीनता नहीं देखनी पड़ती। राम ने राक्षसों आदि को भी क्षमा नहीं किया। उन्हें यम लोक पहुंचा कर ही दम लिया।

पंडित धर्मदेव विद्या मार्तण्ड ने श्री राम के सम्बन्ध में सत्य ही लिख है-

गुणेन शीलेन, बलेन विद्यया सत्येन शान्त्या विनयेन चैव।
योऽभूद् वरेण्यः किन मानवनां राम स्मरामः पुरुषोत्तमं तम्।।

अर्थात् गुण, शील, बल, विद्या, सत्य, शान्ति और विनय से जो मनुष्यों में अत्यन्त श्रेष्ठ हुआ, ऐसे पुरुषोत्तम श्री राम का हम स्मरण करते हैं।

-सम्पादक

गतांक से आगे.........

सत्यार्थ प्रकाश

अथ चतुर्दशसमुल्लासारम्भः

अथ यवनमतविषयं व्याख्यास्यामः

५-यह पुस्तक कि जिस में सन्देह नहीं परहेजगारों को मार्ग दिखलाती है। जो कि ईमान लाते हैं साथ गैब (परोक्ष) के, नमाज पढ़ते, और उस वस्तु से जो हम ने दी खर्च करते हैं। और वे लोग जो उस किताब पर ईमान लाते हैं जो रखते हैं तेरी ओर वा तुझ से पहिले उतारी गई, और विश्वास कयामत पर रखते हैं। ये लोग अपने मालिक की शिक्षा पर हैं और ये ही छुटकारा पाने वाले हैं। निश्चय जो काफिर हुए उन पर तेरा डराना न डराना समान है। वे ईमान न लावेंगे।। अल्लाह ने उन के दिलों, कानों पर मोहर कर दी और उन की आंखों पर पर्दा है और उन के वास्ते बड़ा अजाब है।

-मं० १। सि०१। सूरत २। आ० १। २।३।४। ५। ६।७।।

(समीक्षक) क्या अपने ही मुख से अपनी किताब की प्रशंसा करना खुदा की दम्भ की बात नहीं? जब 'परहेजगार' अर्थात् धार्मिक लोग हैं वे तो स्वतः सच्चे मार्ग पर हैं और जो झूठे मार्ग पर हैं उन को यह कुरान मार्ग ही नहीं दिखला सकता, फिर किस काम का रहा?।।१।। क्या पाप पुण्य और पुरुषार्थ के विना खुदा अपने ही खजाने से खर्च करने को देता है ? जो देता है तो सब को क्यों नहीं देता ? और मुसलमान लोग परिश्रम क्यों करते हैं? ।।२।। और जो बाइबल इंजील आदि पर विश्वास करना योग्य है तो मुसलमान इजील आदि पर ईमान जैसा कुरान पर है वैसा क्यों नहीं लाते ? और जो लाते हैं तो कुरान का होना किसलिये ? जो कहें कि कुरान में अधिक बातें हैं तो पहिली किताब में लिखना खुदा भूल गया होगा ! और जो नहीं भूला तो कुरान का बनाना निष्प्रयोजन है। और हम देखते हैं तो बाइबल और कुरान की बातें कोई कोई न मिलती होंगी नहीं तो सब मिलती हैं। एक ही पुस्तक जैसा कि वेद है क्यों न बनाया? कयामत पर ही विश्वास रखना चाहिये अन्य पर नहीं ? ।। ३।। क्या जो ईसाई और मुसलमान ही खुदा की शिक्षा पर हैं उन में कोई भी पापी नहीं है? क्या ईसाई और मुसलमान अधर्मी हैं वे भी छुटकारा पावें और दूसरे धर्मात्मा भी न पावें तो बड़े अन्याय और अन्धेर की बात नहीं है ।।४।। और क्या जो लोग मुसलमानी मत को न मानें उन्हीं को काफिर कहना वह एकतर्फी डिगरी नहीं है ?।। ५।। जो परमेश्वर ही ने उनके अन्तःकरण और कानों पर मोहर लगाई और उसी से वे पाप करते हैं तो उन का कुछ भी दोष नहीं। यह दोष खुदा ही का है फिर उन पर सुख-दुःख वा पाप-पुण्य नहीं हो सकता पुनः उन को सजा जजा क्यों करता है? क्योंकि उन्होंने पाप वा पुण्य स्वतन्त्रता .से नहीं किया।।५।।

६- उनके दिलों में रोग है, अल्लाह ने उन का रोग बढ़ा दिया।

-म० ११ सि० ११ सु० २१ आ० १०।।

(समीक्षक) भला विना अपराध खुदा ने उन का रोग बढ़ाया. दया न आई, उन बिचारों को बड़ा दुःख हुआ होगा। क्या यह शैतान से बढ़कर शैतानपन का काम नहीं है? किसी के मन पर मोहर लगाना, किसी का रोग बढ़ाना, यह खुदा का काम नहीं हो सकता क्योंकि रोग का बढ़ना अपने पापों से है।। ६।।

७-जिस ने तुम्हारे वास्ते पृथिवी बिछौना और आसमान की छत को बनाया।।

-म०११ सि०१। सू०२। आ० २२।।

(समीक्षक) भला आसमान छत किसी की हो सकती है? यह अविद्या की बात है। आकाश को छत के समान मानना हंसी की बात है। यदि किसी प्रकार की पृथिवी को आसमान मानते हों तो उनकी घर की बात है।।७।।

८-जो तुम उस वस्तु से सन्देह में हो जो हम ने अपने पैगम्बर के ऊपर उतारी तो उस कैसी एक सूरत ले आओ और अपने साक्षी अपने लोगों को पुकारो अल्लाह के विना जो तुम सच्चे हो। जो तुम और कभी न करोगे तो उस आग से डरो कि जिस का इन्धन मनुष्य है. और काफिरों के वास्ते पत्थर तैयार किये गये हैं।

-मं०१। सि०१। सु०२। आ०२३। २४।।

(समीक्षक) भला यह कोई बात है कि उस के सदृश कोई सूरत न बने ? क्या अकबर बादशाह के समय में मौलवी फैजी ने बिना नुकते का कुरान नहीं बना लिया था? वह कौन सी दोजख की आग है? क्या इस आग से न डरना चाहिये ? इस का भी इन्धन जो कुछ पड़े सब है। जैसे कुरान में लिखा है कि काफिरों के वास्ते दोजख की आग तैयार की गई है तो वैसे पुराणों में लिखा है कि म्लेच्छों के लिये घोर नरक बना है! अब कहिये किस की बात सच्ची मानी जाय ? अपने-अपने वचन से दोनों स्वर्गगामी और दूसरे के मत से दोनों नरकगामी होते हैं। इसलिए इन सब का झगड़ा झूठा है किन्तु जो धार्मिक हैं वे सुख और जो पापी हैं वे सब मतों में दुःख पावेंगे।।८।।

क्रमशः अगले अंक में...

दयानन्द शास्त्रार्थ प्रश्नोत्तर-संग्रह

निस्सन्देह कौन होते हैं

(शाहपुरा में राजपुरोहित से वार्तालाप-मार्च, १८८२)

रविवार को महाराज वेदभाष्य का कार्य नहीं किया करते थे। एक रविवार को राजपुरोहित छविमल व्यास महाराज के पास आये और 'नमो नारायण' कहकर बैठ गए। महाराज ने उनका 'नमस्ते' शब्द से अभिवादन किया और कहा कि आइये, आज हमारी छुट्टी है और आप से शास्त्रचर्चा करने की सुविधा है। व्यास जी ने कहा कि छुट्टी-मुक्ति तो हमारे लिए हो सकती है क्योंकि हम संसार-बन्धन में बद्ध हैं। आप तो संसार वन्धन में ही नहीं, फिर आपकी छुट्टी वा मुक्ति केसी ? महाराज ने कहा कि हमारी वेद- भाष्य के कार्य से छुट्टी है। व्यास जी ने कहा कि वेदभाष्य धर्म-कार्य से छुट्टी कैसी ? महाराज ने कहा कि धर्मकार्य से नहीं, वेद-भाष्य के कार्य से छुट्टी है। फिर महाराज ने कहा कि कोई शङ्का सन्देह हो तो कहिये। व्यास जी ने उत्तर दिया कि हम तो निःसन्देह हैं, हम किसी शङ्कासन्देह के निवारण करने के लिए आपके पास नहीं आये, हम तो केवल आपसे मिलने के लिए आये हैं। महाराज ने कहा कि निस्सन्देह तो दो ही प्रकार के लोग हो सकते हैं।

यश्च मूढतमो लोको यश्च बुद्धः पारंगतः। द्वौ होमौ सुखमेघेते क्लिश्यत्यन्तरितो जनः।।

अर्थ-दो ही प्रकार के लोग सुख भोगते हैं एक तो वह जो अत्यन्त मूड़ हों, दूसरा वह जो परम बुद्धिमान् हो, दोनों के बीच के लोग क्लेश पाते हैं। आप इन दोनों में कौन हैं? व्यास जी ने इस प्रश्न का कोई उत्तर न दिया, परन्तु थोड़ी देर पीछे कहा कि आप जो समझे, आप तो बुद्धिमान् ही हैं।

(देवेन्द्रनाथ २। ३२०)

मकर-संक्रान्ति' का काल और महत्व, आओ! जानें, कैसे मनायें 'मकर-संक्रान्ति'।

-आचार्य राहुलदेवः

काल गणना और वैदिक मान्यता के अनुसार पृथ्वी की सूर्य के चारों ओर एक सम्पूर्ण परिक्रमा को एक वर्ष कहा जाता है। इस एक वर्ष को दो भागों में बाँटा गया है - उत्तरायण और दक्षिणायण। जो छः छः माह का होता है। २२ जून से २१ दिसम्बर तक दक्षिणायण और २२ दिसम्बर से २१ जून तक उत्तरायण। इसमें उत्तरायण में दिन बडा और रात छोटी होती है, दक्षिणायन में रात बड़ी और दिन छोटा होता है। अब २२ दिसम्बर से उत्तरायण लग चुका है अब धीरे-धीरे दिन बड़ा होगा और रातें छोटी होंगी। अभी हवन में संकल्प कराते समय विद्वान लोग भी 'उत्तरायण' कहते हैं।

जितने काल में पृथ्वी सूर्य के चारों ओर परिक्रमा पूरी करती है उसको एक ''सौर वर्ष'' कहते हैं और कुछ लंबी वर्तुल आकार जिस परिधि पर पृथ्वी परिभ्रमण करती है। उसको ''क्रांति वृत्त'' कहते हैं। ज्योतिष के अनुसार क्रान्ति वृत्त के १२ भाग माने गए हैं। उन १२ भागों के नाम उन-उन स्थानों पर आकाशस्थ नक्षत्रों के प्रकाश से मिलकर बनी हुई कुछ मिलती-जुलती आकृति वाले पदार्थों के नाम पर रख लिए गए हैं।

जैसे - १) मेष २) वृष ३) मिथुन ४) कर्क ५) सिंह ६) कन्या ७) तुला ८) वृश्चिक ९) धनु १०) मकर ११) कुंभ और १२) मीन

प्रत्येक भाग वा आकृति को 'राशि' कहते हैं। जब पृथ्वी एक राशि से दूसरी राशि में संक्रमण करती है तो उसको ''संक्रान्ति'' कहते हैं। लोकाचार और अलंकरण से पृथ्वी के संक्रमण को सूर्य का संक्रमण समझा जाता है। ६ मास तक सूर्य क्रान्ति वृत्त से उत्तर की ओर उदय होता है और ६ मास तक दक्षिण की ओर निकलता है। प्रत्येक ६ माह की अवधि का नाम ''अयन'' है। सूर्य के उत्तर की ओर उदय होने को उत्तरायण और दक्षिण की ओर उदय होने को दक्षिणायन कहते हैं। दक्षिणायन काल में सूर्योदय दक्षिण दिशा की ओर दृष्टिगोचर होता है और उत्तरायण में सूर्य उत्तर दिशा की ओर दृष्टिगोचर होता है। सूर्य की मकर राशि की संक्रांति से उत्तरायण और कर्क राशि की संक्रांति से दक्षिणायण प्रारंभ होता है। मकर संक्रांति के दिन सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करने की दिशा बदलते हुए थोड़ा उत्तर की ओर ढलता जाता है, इसलिए इस काल को ''उत्तरायण'' कहते हैं।

अब यह सामान्य प्रश्न उपस्थित होता है कि जब ''दक्षिणायन'' लगता है तब उत्तरायण की तरह उसे क्यों नहीं मनाया जाता?

इसको इस प्रकार से समझा जा सकता है जैसे रात की अपेक्षा दिन कार्य करने के लिए उत्तम है वैसे ही शास्त्रकारों और उपनिषद कारों ने भी दक्षिणायन की अपेक्षा उत्तरायण को विभिन्न प्रकार के संस्कारों को संपन्न कराने के लिए प्राण छोड़ने के लिए उपयुक्त माना है। वैदिक ग्रंथों में उसको ''देवयान'' कहा गया है और ज्ञानी पुरुष अपने शरीर त्याग तक की अभिलाषा इसी ''उत्तरायण'' में रखते हैं। उनके विचार अनुसार इस समय देह त्यागने से उनकी आत्मा सूर्यलोक में होकर प्रकाश मार्ग से प्रयाण करेगी। भारतीय इतिहास के अनुसार भीष्म पितामह ने इसी उत्तरायण के आगमन तक शरशय्या पर शयन करते हुए प्राण उत्क्रमण की प्रतीक्षा की थी। फिर पितामह ने सूर्य के उत्तरायण होने पर ही स्वेच्छा से शरीर का परित्याग किया था, कारण कि उत्तरायण में देह छोड़ने वाली आत्माएँ या तो देवलोक में चली जाती हैं अर्थात् पुनर्जन्म के चक्र से उन्हें छुटकारा मिल जाता है। इसका मतलब यह नहीं है कि २२ दिसम्बर से लेकर २१ जून तक कोई भी मरेगा तो वह मोक्ष को प्राप्त कर लेगा। इसका मतलब यह है कि जो जितेन्द्रिय, समाधिस्थ योगी पुरुष, ईश्वर की अनुभूति करने के बाद जब वे मोक्ष मार्ग का पथिक बन जाते हैं, तब वे नश्वर शरीर का त्याग करने के लिये 'उत्तरायण' काल का चयन करते हैं। आर्यावर्तुत में ऐसी परम्परा रही है।

स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने भी उत्तरायण का महत्व बताते हुए गीता में कहा है कि उत्तरायण के छह मास के शुभ काल में, जब सूर्य देव उत्तरायण होते हैं और पृथ्वी प्रकाशमय रहती है तो इसे ब्रह्मज्ञानी लोग शरीर त्यागने को श्रेष्ठ काल मानते हैं और आवागमन चक्कर से बचना चाहते हैं। पर यह बिना ईश्वर को साक्षात्कार किये सम्भव नहीं है कि कोई अपने प्राण छोडकर ब्रह्मरन्ध्र से ऊपर उठकर देह त्याग कर सके। क्योंकि अपने आप मृत्यु का वरण करना समाधिस्थ, मृत्युंजय, ब्रह्मज्ञानियों का कार्य हैं। इसके विपरीत सूर्य के दक्षिणायण होने पर पृथ्वी उत्तरायण की अपेक्षा कम प्रकाशमान होती है। अतः उत्तरायण, दक्षिणायन की अपेक्षा अधिक प्रकाशमान होता है। अंधेरा कितना भी उपयोगी हो परन्तु प्रकाश सर्वश्रेष्ठ होता है। सज्जन, ऋषि मुनि और देवता लोग प्रकाश की इच्छा करते हैं। हिंसक पशु, हिंसक मनुष्य, तामसिक प्रवृत्ति के लोग तमस, अज्ञान, अंधकार रात्रि को प्रिय करते हैं।

सूर्य पर आधारित 'मकर-संक्रान्ति' के पर्व को वैदिक धर्म में बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। वैदिक काल गणना के अनुसार यह मकर संक्रांति खगोलीय घटना है, जिससे जड़ और चेतन की दशा और दिशा तय होती है। सूर्य के प्रकाशाधिक्य के कारण उत्तरायण विशेष महत्व शाली माना जाता है और उत्तरायण के आरम्भ दिवस मकर की संक्रान्ति को अधिक महत्व दिया जाता है। यह ऐसा पर्व है जिसे समूचे भारत में मनाया जाता है, चाहे इसका नाम प्रत्येक प्रान्त में अलग-अलग हो और इसे मनाने के तरीके भी भिन्न हों, किन्तु यह बहुत ही महत्व का पर्व है। जब तक सूर्य दक्षिणायन रहता है तब तक उसकी किरणें राजसिक और तामसिक प्रधान ऊर्जा का संक्रमण करती है, जो क्रिया और स्थिति के लिए होती है, लेकिन जब वह सूर्य उत्तरायण की ओर गमन करते लगता है तब उसकी किरणें सात्विक प्रधान ऊर्जा का संक्रमण करती है, जो 'प्रकाश' के लिए है।

आयुर्वेद के अनुसार 'मकर-संक्रान्ति' पर्व का विशेष महत्व है, क्योंकि इस समय शीत अपने यौवन पर होता है। अच्छी सर्दी पड़ रही होती है, वैदिक शास्त्र में इस शीत (सर्दी) का ठीक-ठीक उपयोग करने के लिए इस शीत को ऊर्जा में बदलने के लिए तिल, तिल का तेल, गोंद के लड्डू, गाजर पाक, गाजर का हलवा, मूसली पाक, शतावरी, अश्वगंधा, जावित्री, जायफल, केशर आदि पौष्टिक पदार्थ उपयोगी माने गए हैं। जिसमें तिल की सबसे ज्यादा प्रधानता है। मकर-संक्रान्ति के दिन भारत के सभी प्रान्तों में तिल और गुड़ के लड्डू या तिल की विभिन्न मीठाईयाँ गजक आदि बनाकर दान दिए जाते हैं। परस्पर इष्ट मित्रों में सगे सम्बन्धियों में बांटे जाते हैं।

कैसे मनाएँ मकर संक्रान्ति -

मकर संक्रान्ति के दिन ब्राह्म मुहूर्त में उठकर प्रातः वंदना नित्य दिनचर्या, गृह के परिमार्जन, शोधन आदि के पश्चात स्नान कर नवीन शुद्ध स्वदेशीय वस्त्र परिधान पूर्वक सपरिवार यज्ञ करें। हवन की सामग्री में तिल, गुड़ या खांड का परिमाण प्रचुर मात्रा में होना चाहिए और आहुतिओं की मात्रा व सामर्थ्य अनुसार बढ़ानी चाहिए। यज्ञ के उपरांत स्व सामर्थ्य अनुसार गरीबों में कंबल वितरण, वस्त्र वितरण, खिचड़ी बनाकर बांटना, तिल के पदार्थ बनाकर अपने सगे संबंधी और व्यापारिक भाइयों को परस्पर आदान-प्रदान करना चाहिए। जिससे सामाजिक स्तर पर भी हमारा संगठन मजबूत रहे। शोषित और वंचित वर्ग भी मुख्यधारा में आ सके इसके लिए विशेष प्रयत्न करना चाहिए। कोई भी व्यक्ति शिक्षा से और भोजन से वंचित ना हो। इस पृथ्वी पर स्थित, धरती, वायु, जल, प्राकृतिक साधनों का उपयोग सबके लिए हो। इसी भावना का प्रचार करना चाहिए।

घर में स्नान, प्राणायाम, सन्ध्या के बाद 'नित्य-यज्ञ' के मन्त्रों की आहुति देने के बाद बृहद-यज्ञ विधि के मन्त्रों से आहुतियाँ दें। फिर मकर-संक्रान्ति के मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ प्रदान करें। यज्ञ में आहुति देने के लिए केसर और तिल डालकर चावल और मूंग की मीठी खिचड़ी बनाएं। स्विष्टकृत् आहुति इसी खिचड़ी की देवें।

वैसे मकर संक्रान्ति का असली समय तो २२ दिसम्बर होता है किन्तु भारतवर्ष में १४ जनवरी को मनाने की परिपाटी चली आ रही है। यदि आप १४ जनवरी को मना रहे हैं तो इस प्रकार परिपालन करें और अगले वर्षों में धीरे-धीरे इसे २२ दिसम्बर में मनाने की परिपाटी शुरू करनी है। इसका ध्यान रखें!

आप सभी को रूढी रूप से मनाए जाने वाली मकर संक्रान्ति की बहुत-बहुत शुभकामनाएँ। आप सदैव व्यस्त रहें, स्वस्थ रहें, मस्त रहें।

चलभाष-९६८१८४९४१९

ईश्वर की उपासना के लिए निश्चित मन्त्र एवं मन्त्र चयन

- (स्मृतिशेष) आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः

एक शंका प्रायः यह भी लोगों के मन में आती है कि जो स्वामी दयानन्द जी ने पंचमहायज्ञ विधि में, संस्कारविधि में जो-जो मंत्र लिखे हैं उन्हीं के माध्यम से ईश्वर ध्यान हो का सकता है अन्य किन्ही मंत्रों से ईश्वर का ध्यान नहीं हो सकता क्या यह सत्य है? इसके विषय में उत्तर ये है कि ऐसी बात नहीं है कि उन्हीं मंत्रों के माध्यम से ही ईश्वर का ध्यान हो सकता है। हम वेद के किसी अन्य मंत्र से भी ईश्वर की उपासना, ध्यान कर सकते हैं। इतनी बात अवश्य है कि उन मंत्रों के अंदर ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव का वर्णन होना चाहिए। ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना विषय होने चाहिए। न केवल वेदमंत्र अपितु ऋषियों के बनाए ब्राह्मण ग्रंथों, उपनिषदों में जो श्लोक हैं उन श्लोकों के माध्यम से भी ईश्वर की उपासना कर सकते हैं। दर्शन आदि में ऋषियों द्वारा जो सूत्र बनाये हैं, उनके माध्यम से भी उपासना कर सकते हैं। ऋषियों ने ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव की व्याख्या करते हुए जिन वाक्यों की रचना की है, जो वेद मंत्रों के भाष्य किए हैं, सूत्रों के भाष्य किए हैं, उन भाष्यों के वाक्यों से भी ईश्वर की उपासना कर सकते हैं।

अर्थात् हम किसी भी सामान्य शब्द से भी ईश्वर की प्रार्थना-उपासना कर सकते हैं शर्त एक है मंत्रों में, उन श्लोकों में, वाक्यों में, शब्दों में, ईश्वर के गुण-कर्म- स्वभाव का वर्णन आता हो। कोई भी मंत्र, कोई भी वाक्य, कोई भी सूत्र, कोई भी श्लोक ईश्वर कैसा है ? किस प्रकार के गुण वाला है ? किस प्रकार के कर्मों को करता है ? किस प्रकार के स्वभाव वाला है ? आदि विषयों को यदि बताता है तो उस मंत्र, सूत्र, श्लोक, वाक्य, शब्द से हम ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना कर सकते हैं।

जो व्यक्ति मंत्र भी नहीं जानता है, श्लोक भी नहीं जानता है, सूत्र भी नहीं जानता है, संस्कृत भी नहीं जानता है, ऋषियों के वाक्यों को भी नहीं जानता है, कोई अच्छे संस्कृत का शब्द उसके पास नहीं हैं तो उसका भी उपाय है कि विद्वानों के, भक्तों के बनाए जो भजन, गीत हैं उन भजनों के माध्यम से भी ईश्वर का ध्यान कर सकता है। ध्यान के लिए एकाग्रता व समर्पण आवश्यक है। यदि हमारा समर्पण ईश्वर के प्रति है और हम एकाग्र है, उसके प्रति प्रेम है, तो ईश्वर का ध्यान भजन से भी कर सकते हैं और गीत से भी कर सकते हैं।

उपासना हेतु मन्त्र चयन

जिन मन्त्रों का चयन ऋषियों ने ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना- उपासना के लिए किया है उन मन्त्रों में ईश्वर की उपासना कैसे करनी चाहिए ? क्या-क्या माँगना चाहिए? हमको क्या-क्या अपेक्षा है ? वो सारी बातें उन मंत्रों में निहित हैं। शरीर के विषय में, मन के विषय में, आत्मा के विषय में

क्रमशः.....७ पर

क्या मूर्ति पूजा और प्राण प्रतिष्ठा वेद संगत नहीं है?

-रिपुदमन आर्य

कोई मूर्तियों को ईश्वर पर ध्यान केन्द्रित करने का साधन बताता हैं तो कोई यह तर्क देता हैं की प्राण प्रतिष्ठा के पश्चात ईश्वर स्वयं मूर्तियों में विराजमान हो जाते हैं।

जो इस प्रकार कहते हैं उनसे निवेदन है कृपया आप हमें वेद (ऋग्वेद , यजुर्वेद, साम वेद, अथर्व वेद), वेदांग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद, और ज्योतिष - जिसमें अंक गणित, बीज गणित , भूगोल , खगोल , और भूगर्भ विद्या है), उपांग (योग, सांख्य, न्याय, वैशेषिक, वेदांत, और पूर्व मीमांसा) ग्रंथों से बतलाने की कृपा करें कि कहाँ लिखा हुआ है कि - " मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा करने के बाद वह देवता बन जाता है और वह प्राण प्रतिष्ठा से पहले देवता नहीं होता। केवल कह देने मात्र से बात की सिद्धि नहीं होती है। "लक्षण प्रमाणाभ्याम् वस्तु सद्धि न तु प्रतिज्ञा मात्रेण" लक्षण और प्रमाण के द्वारा वस्तु की सिद्धि की जाती है, केवल कह दिया इससे वस्तु की सिद्धि नहीं होती। इसीलिए प्रमाण दीजिये और तर्क की कसौटी पर कसिए।

यह भी बतलाने की कृपा करें कि - प्राण किसे कहते हैं? प्राण उसका नाम है जिससे व्यक्ति का जीवन चलता है, जिसके होने से आत्मा सुख दुःख की अनुभूति करता है, जिसके होने से स्वांस लेता है और छोड़ता है, जिसके होने से प्राणी के शरीर की वृद्धि होती है, जिसके होने से प्राणी चलता है, जिसके होने से व्यक्ति बातचीत करता है। श्रीमान जी! जब पूजनीय पंडित जी मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा करते हैं मन्त्रों के द्वारा तब क्या मूर्ति बोलने लग जाता है? क्या प्राणी की तरह मूर्ति भी स्वांस लेता है और छोड़ता है? क्या उसके शरीर की वृद्धि और ह्रास भी होती है? क्या मूर्ति एक दूसरे से वार्तालाप भी करता है? कोई भी लक्षण आपके द्वारा प्राण प्रतिष्ठित मूर्ति में नहीं घटा है, न घटा था और न भविष्य में घटेगा। और वेदों का प्रमाण आप दे नहीं सकते, हाँ केवल मात्र बोल सकते हैं और यदि आप परेशान हो जाएंगे, खीझ जाएंगे तो तो हमें गाली भी दे सकते हैं, मार भी सकते है परन्तु सही उत्तर नहीं दे सकते।

निरुक्त में महर्षि यास्क लिखते हैं कि - देवो दानाद्वा, दीपनाद्वा, द्योतनाद्वा, द्युस्थानो भवतीति वा। यो देवः सा देवता। जो विद्यादि शुभ गुणों का दान देता है और ईमानदारी पूर्वक कमाए हुए धनों में से दशांश धन समाज की उन्नति के लिए देता है उसको देवता कहते हैं, जो सत्योपदेश का प्रकाश करता है उसे देवता कहते हैं, जो सब मूर्तिमान द्रव्यों का प्रकाश करता है उसे देवता कहते हैं इसीलिए सूर्यादि लोकों का नाम देवता है। माता, पिता, आचार्य, और अतिथि पालन करते हैं, विद्यादि शुभ गुणों का दान देते हैं, सत्योपदेश करते हैं इसीलिए ये सभी माता पितादि देवता हैं। और इन सभी देवों का देव महादेव परम पिता परमेश्वर सबका उपास्य देव हैं। क्या उपरोक्त देवता का लक्षण प्राण प्रतिष्ठित मूर्ति में घटता है? और यदि प्राण प्रतिष्ठा वास्तव में संभव है, तो क्यों नहीं मृत शरीर के अंदर प्राण प्रतिष्ठा कर दी जाती? क्यों नहीं मृत को पुनर्जीवित किया जाता?

साथ ही हमारी छोटी सी शंका सदा यहीं रहती हैं की क्यों मूर्ति में विराजमान ईश्वर मुसलमानों के आक्रमण के समय अपनी रक्षा नहीं कर पाते हैं या तो सोमनाथ की तरह विध्वंश के शिकार हो जाते हैं अथवा काशी विश्वनाथ की तरह कुँए में छुपा दिए जाते हैं?

वेदों में केवल और केवल एक ही ईश्वर की उपासना का विधान हैं। स्वामी दयानंद सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम सम्मुलास में प्रश्नोत्तर के रूप में इस विषय पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं। प्रश्न- वेदों में जो अनेक देवता लिखे हैं, उसका क्या अभिप्राय हैं?

उत्तर- देवता दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण कहाते हैं, जैसे की पृथ्वी परन्तु इसको कहीं ईश्वर वा उपासनीय नहीं माना हैं।

ऋग्वेद भाष्य मंत्र १.१६४.३९ में यहीं भाव इस प्रकार दिया हैं- उस परमात्मा देव में सब देव अर्थात दिव्य गुण वाले सुर्यादि पदार्थ निवास करते हैं, वेदों का स्वाध्याय करके उसी परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए. जो लोग उसको न जानते, न मानते और उसका ध्यान नहीं करते , वे नास्तिक मंदगति, सदा दुःख सागर में डूबे ही रहते हैं।

ऋग्वेद ६.४५.१६ में भी अत्यंत स्पष्ट शब्दों में कहाँ गया हैं की हे उपासक, जो एक ही हैं, उस परम ऐश्वर्या शाली प्रभु की ही स्तुति उपासना करो। ऋग्वेद १०. १२१.१-९ ईश्वर को हिरण्यगर्भ और प्रजापति आदि नामों से पुकारते हुए कहाँ गया हैं की सुखस्वरूप और सुख देने वाले उसी प्रजापति परमात्मा की ही समर्पण भाव से भक्ति करनी चाहिए.स्वामी दयानंद जी मूर्ति पूजा के घोर विरोधी थे। मूर्ति पूजा के विरुद्ध उनका मंतव्य वेदों में मूर्ति पूजा के विरुद्ध आदेश होने के कारण बना।

सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में उन्होंने मूर्ति पूजा के विषय में लिखा की "वेदों में पाषाण आदि मूर्ति पूजा और परमेश्वर के आवाहन-विसर्जन करने का एक अक्षर भी नहीं हैं।

एक स्थल पर स्वामी जी ने मूर्ति पूजा की १८ हानियाँ भी गिनाई हैं। स्वामी जी की मूर्तिपूजा के विरोध में प्रबल युक्ति यह हैं की परमात्मा निराकार हैं, उसका कोई शरीर नहीं हैं, शरीर रहित निराकार परमात्मा की भला कैसे कोई मूर्ति हो सकती हैं? इसलिए मूर्ति को ईश्वर मानकर उसकी पूजा करना नितांत अज्ञानता की बात हैं।

यजुर्वेद ३२.३ - "न तस्य प्रतिमा अस्ति" अर्थात उस परमात्मा की कोई प्रतिमा नहीं हैं का प्रमाण मूर्ति पूजा के विरुद्ध आदेश हैं। वैदिक काल में निराकार ईश्वर की पूजा होती थी जिसे कालांतर में मूर्ति पूजा का स्वरुप दे दिया गया। श्री रामचंद्र जी महाराज और श्री कृष्ण जी महाराज जो उत्तम गुण संपन्न आर्य पुरुष थे उन्हें परमात्मा का अवतार बनाकर उनकी मूर्तियाँ बना ली गयी। ईश्वर जो अविभाजित हैं उनके तीन अंश कर ब्रह्मा, विष्णु और महेश पृथक पृथक कर दिए गए। यह कल्पना भी वेद विरुद्ध हैं। उनकी पृथक पृथक पत्नियों की भी कल्पना कर दी गयी।

स्वामी दयानंद ने अवतारवाद को भी वेद विरुद्ध मान कर उनका खंडन किया हैं।

यजुर्वेद ४०.८ मन्त्र में परमात्मा का वर्णन इस प्रकार किया गया हैं"वह सर्वत्र व्यापक हैं, वह सब प्रकार से पवित्र हैं, वह कभी शरीर धारण नहीं करता, इसलिए वह अव्रण हैंअर्थात उनमें फोड़े-फुंसी और घाव आदि नहीं हो सकते, वह शरीर न होने से नस नाड़ी के बंधन से भी रहित हैं, वह शुद्ध अर्थात रजोगुण आदि से पृथक हैं, पाप उसे कभी बींध नहीं सकता अर्थात किसी प्रकार के पाप उसे कभी छु भी नहीं सकता, वह कवि अर्थात सब पदार्थों का गहरा क्रांतदर्शी ज्ञान रखने वाला हैं, वह मनीषी अर्थात अत्यंत मेधावी हैं अथवा जीवों के मनों की बातों को भी जानने वाला हैं, वह परिभू अर्थात पापियों का पराभव करने वाला हैं, स्वयंभू हैं अर्थात स्वयंसिद्ध हैं। उसका कोई कारण नहीं हैं , वह अनादिकाल से कल्प कल्पान्तारों में सृष्टि के पदार्थ की यथावत रचना करता आ रहा हैं" यजुर्वेद के इस मंत्र में परमात्मा का कोई भौतिक शारीर होने की बात का इतने प्रबल शब्दों में निषेध कर दिया गया हैं की इसे पढने के बाद ईश्वर को मानव रूप में अवतार लेना केवल दुराग्रह मात्र हैं। इस प्रकार वेदों की साक्षी से यह प्रमाणित हो जाता हैं की ईश्वर एक हैं,निराकार हैं,अजन्मा हैं,नित्य हैं, अवतार नहीं लेता।

अब भी पाठक गण अगर इसके विपरीत ईश्वर का होना मानते हैं तो वे वेद रुपी पावन ज्ञान के दर्शन होने पर भी अज्ञान में ही रहना चाहते हैं!!

●●●

गीत

जिस देश में प्राणप्रतिष्ठा से मूर्ति भगवान् बन जाती हो।
उस देश का आध्यात्मिक गुरु बन जाना मुश्किल है।।
जिस देश में गंगा दर्शन से पाप सभी धुल जाते हों।
उस देश में बढ़ते अपराधों पर रोक लगाना मुश्किल है।।
जहां हजारों मत पन्थों की थोक दुकानें चलती हों।
वहां एकता के गीतों पर ढोल बजाना मुश्किल है।।
जहां हाथों की रेखाएं ही किस्मत के फैसले करती हों।
वहां कर्मशीलता पौरुष का पाठ पढ़ाना मुश्किल है।।
जिस देश में महादेव के लिंग की पूजा होती हो।
वहां ऋषि मुनियों का सम्मान बचाना मुश्किल है।।
जिस देश में श्रीकृष्ण पर रासलीला का लांछन लगे।
वहां चरित्र की उज्जवलता के दर्शन पाना मुश्किल है।।
जहां भागवत कथा से मोक्ष का द्वार खुल जाता हो।
वहां वेदों के अध्ययन का शौक जगाना मुश्किल है।।
जिस देश में पाखंडी बलात्कारी पूजे जाते हों।
उस देश में सच्चे ईश्वर का स्वरूप बताना मुश्किल है।।
जिस देश में साधु संत धन के ढेरों पर सोते हों।
उस देश में योग का सन्मार्ग दिखाना मुश्किल है।।
जिस देश की जनता निज इतिहास भुलाकर बैठी हो।
दुनिया के नक्शे पर उसकी पहचान बनाना मुश्किल है।।

-अज्ञात

चलो टंकारा! लोकनीय टंकारा!! चलो टंकारा!!

संजय सत्यार्थी, आर्योपदेशक

सज धज कर फिर चमक उठा है टंकारे का प्रांगण।।
जन्मोत्सव स्मरणोत्सव का सबको खुला आमंत्रण।।
आर्यो करो स्वीकार निमंत्रण - 2
लोकनीय बन गया ऋषि का जन्म भूमि टंकारा ।
दयानंद की पावन धरती को है नमन हमारा।
इस धरती पर आर्य जनों का होगा मधुर मिलन।।
आर्यो करो स्वीकार निमंत्रण - 2
सबसे पहले ऋषि द्वार है इस नगरी की शोभा।
पता दे रहा ओम पताका फैलता अद्भुत आभा।
आस्थान अति सुंदर जिसमे होगा मंत्र समंजन।।
आर्यो करो स्वीकार निमंत्रण - 2
डेमी नदी के तट पर छोटा बना था एक शिवालय।
आज वहां पर भव्य बना है उपदेशक विद्यालय।
लोभनीय वहाँ यज्ञशाला मे होगा यज्ञ हवन।।
आर्यो करो स्वीकार निमंत्रण - 2
धूम मचे हर आर्य समाजों में ऋषि जन्मोत्सव की।
उत्प्रेरक इस धरा के लिए ललक जगे हम सबकी।
वेदों की चर्चा विद्वानों से, सुनें! धन्य हो जीवन ।।
आर्यो करो स्वीकार निमंत्रण - 2
प्रभु कृपा से पुण्य भूमि पर लगेगा अद्भुत मेला।
देश देशांतर के आर्यो का होगा रेलम रेला ।
उत्साहित ऊर्जा से पग पग हो उन्नति संवर्धन।।
आर्यो करो स्वीकार निमंत्रण - 2
सार्वदेशिक और ट्रस्ट टंकारा,का सर्वोत्तम कार्य।
पूनम सूरी का आह्वान है,संग सुरेश चन्द आर्य।
स्वागत हेतु खडा है " संजय " मोरवी का कण कण।।
आर्यो करो स्वीकार निमंत्रण - 2

चलभाष-७७१७७६६१५१

पारिवारिक व्रत एवं आचरण

-पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

ओ३म् अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम्।। -अथर्ववेद ३/३०/२

अन्वय- पुत्रः पितुः अनुव्रतः भवतु। पुत्रः माता सह संमनाः भवतु। जाया पत्ये मधुमतीं शान्तिवां वाचं वदतु।।

अर्थ- (पुत्रः) पुत्र (पितुः) पिता का (अनुव्रतः) अनुव्रत हो अर्थात् उसके व्रतों को पूर्ण करे। पुत्र (मात्रा) माता के साथ (संमनाः) उत्तम मनवाला (भवतु) हो अर्थात् माता के मन को संतुष्ट करने वाला हो। (जाया) पत्नी को चाहिए कि वह (पत्ये) पति के साथ (माधुमतीम्) मीठी और (शान्तिवाम्) शान्तिप्रद (वाचम्) वाणी (वदतु) बोले।

व्याख्या- इस वेदमंत्र में वे आरम्भिक साधन बताये हैं जिनसे गृहस्थ सुव्यवस्थित रह सकता है। ऊपरी दृष्टि से ऐसा लगता है कि जिन बातों का इस मन्त्र में प्रतिपादन है वे अतिसाधारण और चालू हैं। उनको असभ्य और अशिक्षित लोग भी समझते हैं। उनके लिए वेदमंत्र की आवश्यकता नहीं। परन्तु गम्भीर दृष्टि से पता चलेगा कि बहुत सी बातें विचारणीय और ज्ञातव्य हैं। उदाहरण के लिए दो शब्दों पर विचार कीजिए- एक 'पुत्र' और दूसरा 'अनुव्रतः'। यहां केवल इतनी ही बात नहीं है कि सन्तानों को मां-बाप की सेवा करनी चाहिए और उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिए। यद्यपि जिस किसी ने संसार में सबसे पहले लोगों को यह उपदेश किया होगा, उस समय इतनी छोटी-सी बात भी बहुत बड़ी और अद्भुत मालूम होती होगी। आज भी यद्यपि कथन मात्र से इस बात को सभी जानते हैं, फिर भी व्यवहार में तो अत्यन्त न्यूनता दिखाई देती है। आज्ञाकारी राम तो कथाओं का ही विषय हैं। व्यवहार में तो जिन घरों में हिरण्यकश्यप नहीं हैं वहां भी किसी न किसी बहाने से सन्तान प्रह्लाद का स्वांग खेलने के लिए उत्सुक रहती है। कुछ ऐसे भी मनचले हैं जो ऐसी शिक्षाओं को असामयिक और प्राचीनकाल की दास-प्रथा का प्रतीक समझते हैं। बेटा बाप की आज्ञा क्यों मानें? इस प्रकार प्राचीन आचार शास्त्र के बहुत से छोटे-मोटे नियम हैं जो आजकल भावी विकास में बाधक समझे जाते हैं। यूँ तो हर मानवी संस्था में समय-समय पर दोष आ जाया करते हैं और उनके सुधार की आवश्यकता होती है। यदि संसार के पिता हिरण्यकश्यप बन जाएं तो ऐसी संस्थाएँ भी प्रशंसा की दृष्टि से देखी जायेंगी जो बालकों में प्रह्लाद की भावनाओं का प्रसार करें, क्योंकि परिवार का संगठन तो तभी सुरक्षित रह सकता है जब पिता और पुत्र दोनों धार्मिक हों। कोढ़ी माँ-बाप की सन्तान को उनसे अलग रखा जाता है कि वह कोढ़ दूसरी पीढ़ी में भी न आ जाए। चोर और डाकुओं की सन्तान के भी पृथक्करण की आवश्यकता होती है। परन्तु ये तो अपवाद मात्र हैं। यह साधारण जीवन का आचार शास्त्र नहीं, अपितु आचार सम्बन्धी अस्पतालों की नियमावली है, जो सामान्य जीवन से कुछ भिन्नता रखती है।

अच्छा! आइये पहले 'अनुव्रत' शब्द पर विचार करें। इसके लिए देखना यह है कि सृष्टिक्रम में सन्तानोत्पत्ति की व्यवस्था क्यों रखी गई? यदि कोई परिवार सन्तानहीन ही लुप्त हो जाए तो क्या हानि है? और यदि एक क्षण में समस्त संसार नष्ट हो जाए तो किसका क्या बिगड़े? परन्तु ये प्रश्न वही कर सकते हैं जो जीव की स्वतन्त्र सत्ता और उसकी आवश्यकताओं पर विचार नहीं करते। परमात्मा ने यह सृष्टि खेल के लिए नहीं बनाई। यह जीव के विकास के लिए बनाई गई है। दुर्गुणों से बचने और सद्गुणों को ग्रहण करने के लिए बनाई गई है। पशु-पक्षियों की बुद्धि इतनी कम है कि उनके आचार की व्यवस्था ईश्वर ने सीधी अपने हाथ में रखी है। जैसे बहुत छोटे बालकों पर बुद्धिमान् पिता उनकी व्यवस्था का भार नहीं छोड़ता, परन्तु विद्वान् और परिपक्व सन्तान अपना विधान आप बनाने में स्वतन्त्र होती है। यही प्रथा पशु-पक्षियों की है। मधुमक्खी को छत्ता बनाने या बया को घोंसला बनाने के लिए किसी इंजीनियरिंग कालेज की आवश्यकता नहीं पड़ती, परन्तु मनुष्य का बच्चा तो मुंह धोने का नियम भी सीखता है। अतः स्पष्ट है कि मानवजाति के लिए एक आचार शास्त्र चाहिए जो परम्परा से चालू रहे। इसी का नाम व्रत है। अब यज्ञोपवीत दिया जाता है तो एक मन्त्र पढ़ते हैं-

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि
तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि।।
-यजुर्वेद १।५

अर्थात् मैं एक व्रत करता हूँ। परमात्मा इस व्रत के पालन में मेरी सहायता करें वह व्रत क्या है? अनृतात् सत्यमुपैमि। असत्य का त्याग और सत्य का ग्रहण। वेदों के पुनरुद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इसीलिए इस व्रत (सत्य) को विशेष स्थान दिया है। इस नियम पर प्रत्येक मनुष्य के विकास का आधार है। महात्मा गाँधी का समस्त जीवन सत्य की खोज और उसके पालन में व्यतीत हुआ। जिसने सत्य की खोज नहीं की वह सत्य का पालन क्या करेगा? जो लोग 'श्रद्धा' का अर्थ लेते हैं- 'सत्य की खोज से संकोच और प्रचलित प्रथाओं या गुरुजनों पर अन्धविश्वास', वे श्रद्धा शब्द की व्युत्पत्ति तथा अर्थों से अनभिज्ञ हैं। 'श्रद्धा' दो शब्दों से बनता है, 'श्रत्' अर्थात् सत्य और 'धा' अर्थात् धारण करना। अतः श्रद्धा का भी वही अर्थ है जो अनृतात् सत्यमुपैमि का। प्रत्येक बच्चे को यह व्रत लेना पड़ता है और यह आशा की जाती है कि आयुपर्यन्त इसका पालन करे। मानवजाति के कल्याण के लिए यह आवश्यक है और हर गृहस्थ को यह व्रत लेना चाहिए।

परन्तु यह परम्परा तो तभी चल सकती है, जब भावी सन्तान पूर्वजों के व्रत का आदर करे। इसीलिए कहा कि पुत्र को पिता का 'अनुव्रत' होना चाहिए। यह दायभाग में सबसे बड़ी सम्पत्ति है, जो कोई पिता अपने पुत्र के लिए या कोई आचार्य अपने शिष्य के लिए छोड़ सकता है। 'अनुव्रत' का प्रश्न तो तभी उठेगा जब 'व्रत' होगा। माता-पिता के जो आचरण आकस्मिक या स्वाभाविक रूप से इस 'व्रत' के अन्तर्गत नहीं वे अनुपालनीय भी नहीं। इसीलिए गुरु उपदेश देता है कि हमारे जो-जो सुचरित हैं वे ही पालनीय हैं (नो इतराणि) अन्य नहीं। व्यक्तिगत घटनाएँ नहीं अपितु वैदिक संस्कृति ही प्रत्येक माता-पिता को करणीय और प्रत्येक पुत्र या पुत्री को अनुकरणीय है।

अब 'पुत्र' शब्द के अर्थों पर विचार कीजिए। हर बच्चा जो उत्पन्न होता है पुत्र कहलाने के योग्य नहीं। शास्त्र के विधान से उसको 'पुत्र' बनने की योग्यता प्राप्त करनी चाहिए। सन्तान के लिए संस्कृत में अनेक पर्याय हैं जैसे- तुक, तोकं, तनयः, तोक्मन्, तक्म, शेषः, अप्नः, गयः, जाः, अपत्यं, यहुः, सूनुः, नपात्, प्रजा, बीजम् इति पंचदश अपत्यनामानि (निघण्टु २/२)। परन्तु पुत्र का एक विशेष अर्थ है। यास्काचार्य ने निरुक्त में पुत्र शब्द की यह व्युत्पत्ति दी है 'पुत् त्र'। पुत् नाम है नरक का। नरक से जो रक्षा करे उसे पुत्र कहते हैं। मनुस्मृति में भी यही कहा है-

पुंनाम्नो नरकाद् यस्मात् त्रायते पितरं सुतः। तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयम्भुवा।।
पौत्रदौहित्रयोर्लोके विशेषो नोपपद्यते। दौहित्रोपि ह्यमुत्रैनं संतारयति पौत्रवत्।।
(मनुस्मृति ९।१३८, १३९)

'पुत्' अर्थात् नरक से जो तारे वह है पुत्र। पुत्र के अन्तर्गत लड़के और लड़की तो आते ही हैं, इनके लड़के-लड़कियाँ भी आते हैं, क्योंकि वे सब ही नरक से तारने वाले हैं।

यह नरक त्राण क्या है, इस पर विचार करना चाहिए। पौराणिकों ने नरक को एक स्थान विशेष माना है जहां पापी लोग जाते हैं और यदि पुत्र मृतकों का श्राद्धतर्पण करता है तो उसके पितृगण नरक से छूटकर स्वर्ग में चले जाते हैं। यह बात वैदिक कर्मफलवाद के सिद्धान्त के सर्वथा विरुद्ध है। फिर प्रश्न है कि पुत्र पिता को नरक से कैसे छुड़ाता है?

कोई मनुष्य एक जन्म में पूर्ण विकास या परमपद को प्राप्त नहीं हो सकता इसके लिए जन्म-जन्मान्तर का अभ्यास आवश्यक है। यह पुनर्जन्म के द्वारा होता है। जो आज बाप कहलाता है वह कल बेटा होगा। जिसको अगली पीढ़ी कहते हैं वह पिछली पीढ़ी हो जायेगी। और अगली पीढ़ी की शिक्षा-दीक्षा का भार उसी पीढ़ी पर होगा। आज मैं और मेरे समवयस्क पितृश्रेणी में हैं। उनके ऊपर सन्तान की शिक्षा का भार है। कल हम मरकर बच्चे होंगे और जिनको हम पुत्र-पौत्र कहते हैं, वे पितृगण कहलायेंगे और हमारी शिक्षा का भार उन पर होगा। यह पिता-पुत्र का सम्बन्ध अनादि काल से प्रवाह चक्र के समान चला आता है। यदि हमारी सन्तान ने हमारी सुरक्षित संस्कृति को अपने हाथ में लेकर उसे समुन्नत किया तो वह समुन्नत संस्कृति हमारे दूसरे जन्म में हमारी सहायक होगी और इस प्रकार हमारे वर्तमान पुत्र अपने सुकर्मों के द्वारा हमारे कर्म और विकास के लिए उत्कृष्ट क्षेत्र छोड़ सकेंगे। इसी का नाम है नरक त्राण या पुत् नामक नरक से रक्षा। प्रत्येक अतीत पीढ़ी के जीवात्मा अगले जन्म में भावी बन जाते हैं और उनको अपनी पिछली पीढ़ी वालों के निर्मित क्षेत्र की अपेक्षा और आकांक्षा होती है।

एक दृष्टान्त लीजिए। आज हमारे पुत्रों ने अपनी योग्यता से देश-देशान्तरों में वैदिक भाषा, वैदिक परम्पराओं और वैदिक संस्कृति का प्रचार कर दिया। जब हमने दूसरा जन्म लिया तो ये परम्पराएँ उस जन्म में हमारी सहायक होंगी। यदि हमारी सन्तान की भूलों से वैदिक परम्पराएँ नष्ट हो गई तो हम ऐसी दुनिया में जन्म लेंगे जो अवैदिक और प्रतिकूल होंगी, अतः हमें बड़ी कठिनाई होगी। यही नरक है।

कल्पना कीजिए कि आप एक बाग लगाते हैं और उसका निरीक्षण अपने लड़कों पर छोड़कर चार वर्ष के लिए विदेश चले जाते हैं। अब यदि आपके लड़के योग्य हैं तो बाग को समुन्नत करेंगे और जब आप विदेश से लौटेंगे तो बाग अच्छा मिलेगा। परन्तु यदि सन्तान ने प्रमाद किया और बाग उजड़ गया तो आपको नये सिरे से काम करना पड़ेगा। यही स्वर्ग और नरक है और यह आपके विकास में साधक या बाधक है। महर्षि स्वामी दयानन्द से पूर्व की सैकड़ों पीढ़ियों के लोग यदि यह समझते कि अपने पूर्वजों के नरक त्राण की दृष्टि से वैदिक धर्म का लोप न होने दें, तो महर्षि दयानन्द को फिर से वैदिक धर्म का जीर्णोद्धार करने का कष्ट न उठाना पड़ता और उनका जीवन आरम्भिक कक्षा की शिक्षा देने के स्थान में उच्च कक्षा की शिक्षा देने में काम आता।

कल्पना कीजिए कि मैं मरकर अरब में पुनर्जन्म लूँ तो वहाँ अवैदिक इस्लाम का प्रचार पाऊँगा और अपने पूर्वजन्म के संस्कारों के प्राबल्य के आधार पर यदि वैदिक जीवन व्यतीत करना चाहूँ तो कितनी कठिनाई होगी। परन्तु यदि इस पीढ़ी में वहाँ वैदिकधर्म का प्रचार हो जाए तो मुझे कितनी सुविधा हो! वैदिक संस्कृति में पले हुए वैदिकव्रतों के व्रती पिताओं के पुत्रों का कर्तव्य है कि अपने पितृगण के भावी क्षेत्र को अनुकूल बनाने के लिए पिताओं के अनुव्रत हों। इस प्रकार वे अपने और अपने पीछे आने वालों के लिए क्षेत्र तैयार कर सकेंगे। व्यक्ति तो मर चुकते हैं परन्तु संस्कृतियाँ बनी रहती हैं। कुलों की सन्तति, राज्यों की सन्तति और धन-सम्पत्ति को स्थिर या चिरस्थायी बनाने के हेतु हम सन्तान चाहते हैं। संस्कृति की सन्तति मुख्य चीज है। वही साध्य है और सन्तान उस सन्तति का साधन है।

अब कहा कि पुत्र को 'मात्रा संमनाः' माता के साथ समान मन वाला होना चाहिए। माता प्रेम की निधि है। माता से अधिक प्रेम तो कोई करता ही नहीं और प्रेम एक प्रकार का गोंद है जिससे अनैक्य में ऐक्य उत्पन्न होता है, स्वार्थ में परमार्थ आता है, दानवता में मानवता का संचार होता है। अतः अपने मानसिक विकास का सबसे बड़ा साधन है माता के स्नेह को स्मरण रखना। माता का कृतज्ञ होना ही मनुष्य के आत्म-निर्माण की पहली सीढ़ी है।

मन्त्र के पिछले चरण में पत्नी के लिए उपदेश है कि पति के साथ मीठी और शान्तिप्रद वाणी बोले। पुरुष स्वभाव से कुछ कर्कश होता है और स्त्री का स्वभाव कोमल होता है। पुरुष दांत है तो स्त्री जीभ है। जीभ और दांत का सामीप्य है। कर्कशता और कोमलता का सम्मिलन है। समस्त शरीर में जहां नर्म पेशियाँ हैं वहां कठोर अस्थियाँ भी हैं। यदि हड्डियाँ ही होती, मांस नहीं होता तो शरीर का व्यापार कैसे चलता? शरीर शरीर न होता, पत्थर की चट्टान होता और यदि पेशियाँ ही होती तो यह ढाँचा ही न होता, हम चल-फिर न पाते। अतः कठोर वस्तुओं को अपना धर्म पालने के लिए कोमल वस्तुओं के सामीप्य, सान्निध्य और साहाय्य की आवश्यकता होती है। मशीन को चालू रखने के लिए तेल की आवश्यकता होती है। गृहस्थ के जटिल जीवन में पत्नी अपनी मधुरवाणी से कर्कशता को कोमल बनाए रखती है। जब पति बाहर के व्यापार से थका-मांदा झुंझलाया हुआ सायंकाल को घर लौटता है तो पत्नी अपनी मधुर स्वागतकारिणी वाणी से भारी थकावट दूर कर देती है। पत्नी वस्तुतः पत्नी अर्थात् पति की रक्षिका बन जाती है। यह आनन्द केवल वैवाहिक जीवन में ही प्राप्त हो सकता है, अन्यत्र नहीं। इसीलिए पत्नी को 'जाया' कहा। न केवल इसलिए कि उससे पुत्र उत्पन्न होगा जो उसके कुल और नाम को स्थिर रखेगा, यह तो गृहस्थ का एक स्थूल पक्ष है। परन्तु इसलिए भी कि पत्नी की मीठी बोली पति के लिए प्रतिदिन नये जीवन का संचार करती है। विवाह संस्कार के समय इसी बात को दृष्टि में रखकर ऋग्वेद के इन मन्त्रों का विनियोग रखा गया है-

मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः।।
मधु नक्तमुतोषसो मधुमत् पार्थिवं रजः। मधु द्यौरस्तु नः पिता।।
मधुमान् नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः।।
(ऋग्वेद १/९०/६, ७, ८)

पृष्ठ १ का शेष.....
ने इस प्रकार दिया है-

बहवो दुर्लभाश्चैव ये त्वया कीर्तितता गुणाः। मुने वक्ष्याम्यहं बुद्धवा तै युक्तः श्रूयतां नरः। (बाल १/७)

अर्थात् बहुत दुर्लभ गुणो और कीर्ति से युक्त ऐसे मनुष्य के बारे में आपको बतलाता हूँ, हे मुने ! इसे सुनिए।

बाल्मीकि मुनि एवं नारद ऋषि के इस प्रश्नोत्तर से यह स्पष्ट है कि न तो वाल्मीकि ने ईश्वर विषयक प्रश्न किया था और न नारद जी ने वैसा ईश्वर-विषयक उत्तर दिया था। स्पष्ट शब्दों में वाल्मीकि जी ने उपरोक्त गुणों युक्त मनुष्य के बारे में जिज्ञासा प्रकट की तो नारदजी ने तदनुकुल उन-उन गुणों से युक्त मनुष्य (श्रीराम) के बारें में वाल्मीकि जी को जानकारी दी। इन प्रश्नों में ईश्वर की कोई बात है ही नहीं। अतः नारद वाल्मीकि के इस सम्वाद से भी श्रीराम मनुष्य ही सिद्ध होते हैं।

रामायण के अन्य पात्रों के विचार - रामायण में अनेक पात्र हैं और श्रीराम के बारे में उन सभी के सम्पूर्ण विचार इस छोटे से निबंध में रखना सम्भव नहीं हो पाएगा। इसलिए कुछ विशिष्ट पात्रों के कुछ विचार हम यहाँ रख रहे हैं।

(क) **हनुमान की दृष्टि में श्रीराम**- हनुमान श्रीराम के परम भक्त थे। वे ज्ञानियों में अग्रगण्य थे। इसलिए तुलसीदास ने भी उन्हें 'ज्ञानीनामग्रगण्यं' कहकर पुकारा है। अब हम देखते हैं कि हनुमान की दृष्टि में श्रीराम क्या थे?

सीता की खोज में हनुमान लंका पहुँचे हुए थे। अशोक वाटिका में सीता के साथ वार्ता में हनुमान जी कहते हैं-

अनिद्रः सततं रामः सुप्तोऽपि च नरोत्तमः। सीतेति मधुरावाणी व्याहरन् प्रतिबुध्यते।। (सुन्दर० ३६/४४)

अर्थात् मनुष्यों में उत्तम श्रीराम सदा अनिद्रा की स्थिति में रह रहे हैं और यदि सोते भी हैं तो सीते-सीते की मधुर वाणी के साथ जग जाते हैं। रावण के सम्मुख भी हनुमान ने श्रीराम को ईश्वर' नहीं, बल्कि मनुष्य ही बतलाया है। देखिए-सुग्रीवो न च देवोऽयं न यक्ष न च राक्षसः।

मानुषो राघव राजन् सुग्रीवश्च हरीश्वरः।। (सुन्दर. ५१/२७)

अर्थात् हे राक्षसराज रावण ! सुग्रीव न तो देव हैं और न यक्ष और न राक्षस ही। राघव मनुष्य हैं और सुग्रीव वानरराज हैं।

इन दोनों श्लोकों के प्रमाण से यह स्पष्ट है कि ज्ञानियों में अग्रणी राम-भक्त हनुमान श्रीराम को मनुष्य ही मानते थे।

(ख) **ऋषि विश्वामित्र की दृष्टि में श्रीराम**-अपनी यज्ञ रक्षा के लिए अयोध्या से श्रीराम और लक्ष्मण को लेकर विश्वामित्र बक्सर की ओर चलते हैं। रास्ते में रात्रि-विश्राम के बाद प्रातःकाल ऋषि विश्वामित्र श्रीराम को सम्बोधित करते हुए कहते हैं-

कौसल्या सुप्रजा राम पूर्वा संध्या प्रवर्तृतते। उत्तिष्ठ नरशार्दूल कर्तव्यं दैवमाहनिकम्।। (बालः २३/२)

अर्थात् हे कौशल्या सुपुत्र राम। प्रातः कालीन संध्या हो रही है। हे पुरुष सिंह उठो और प्रातः कालीन देवयज्ञ करो।

इस पर वाल्मीकि ऋषि लिखते हैं--

तस्यर्षे परमोदारं वचः श्रुत्वा नरोत्तमौ। स्नात्वा कृतोदकौ वीरौ जपेतु परमं जपः।। (बालः २३/३)

अर्थात् उस ऋषि के परमोदार वचन को सुनकर मनुष्यों में श्रेष्ठ राम-लक्ष्मण ने स्नान और आचमन करके परम जप का जाप किया।

पुनः ताड़कावध के पूर्व श्रीराम द्वारा स्त्री वध करने में हिचकने पर ऋषि विश्वामित्र श्रीराम को इस प्रकार सम्बोधित करते हैं।

न हि ते स्त्रीवधकृते घृणा कार्या नरोत्तम। चातुर्वर्ण्यं हितार्थं हि कर्तव्यं राज सुनुना।। (बाल. २५/१७)

अर्थात् हे मनुष्यों में उत्तम श्रीराम ! यहाँ स्त्रीवध करना घृणित कार्य नहीं है क्योंकि चारों वर्णों के हित में यह राजपुत्रों का निश्चित कर्तव्य है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ऋषि विश्वामित्र श्रीराम को मनुष्य ही मानते थे, तभी स्थान-स्थान पर उन्हें मनुष्य कहकर सम्बोधित करते हैं, जैसा कि उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट है। साथ ही वाल्मीकि ऋषि भी अपनी पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार श्रीराम को नरोत्तम कहकर ही सम्बोधित करते हैं, जैसा कि उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट है। अस्तु ऋषि युगल के उपरोक्त वचन श्रीराम को मनुष्य ही सिद्ध करते हैं।

(ग) **लक्षाण की दृष्टि में श्रीराम** - लक्ष्मण श्रीराम के छोटे भाई थे। वे अपनी युवावस्था में ही यतिः की तरह ब्रह्मचारी रहकर चौदह वर्षों के वनवास की अवधि में राम की सेवा की थी। उनके विचार भी हम यहाँ रख रहे हैं। श्री राम को वन से अयोध्या वापस करने के लिए जब भरत अयोध्या के जन-समूह के साथ वन में पहुँचते हैं तो लक्ष्मण दूर से उन्हें आक्रामक सेना समझकर श्रीराम से कहते हैं-

निर्मनुष्यामिमां सर्वामयोध्यां मनुजर्षभः। करिष्यामि शरैः तक्ष्णैः यदि स्थास्यति विप्रिये।। (अयो. २१/१०)

अर्थात् हे मनुजश्रेष्ठ श्रीराम ! मैं अपने तीक्ष्ण बाणों से पूरी अयोध्या को मनुष्यहीन कर दूँगा, यदि वह आपके विरोध में खड़ी होती है। अतः यहाँ 'लक्ष्मण की दृष्टि में भी श्रीराम मनुष्य ही दीख रहे हैं, तभी तो वे उनको 'मनुजर्षभः' शब्द से सम्बोधित करते हैं।

(घ) **वैद्य सुषेण की दृष्टि में श्रीराम**-युद्ध के समय लक्ष्मण के मूर्च्छित होने पर श्रीराम विलाप करते हुए कहते हैं कि अन्य जन्मों में मेरे द्वारा किए गए दुष्कर्मों का ही परिणाम है कि मेरा धार्मिक भाई मेरे सामने मरा हुआ पड़ा है (युद्धः १०१/१६) । इस पर वैद्य सुषेण श्रीराम को सम्बोधित करते हुए कहते हैं-

त्यजेमां नरशार्दूल बुद्धिं वैक्लव्यकारिणीम्।। (युद्ध. १०१/२४)

नैव पंचत्वमापन्नो लक्ष्मणे लक्ष्मिवर्धनः।। (युद्ध. १०१/२५)

अर्थात् हे पुरुषसिंह। व्याकुलता को बढ़ानेवाली बुद्धि को त्याग दीजिए क्योकि लक्ष्मणजी पंचतत्त्व (मृत्यु) को नहीं प्राप्त हुए हैं। यहाँ भी वैद्य सुषेण द्वारा श्रीराम को 'नरशार्दूल' कहकर संबोधित करना यह दर्शाता है कि श्रीराम मनुष्य ही थे।

(ङ) **अपनी दृष्टि में श्रीराम** :- अन्य पात्रों के विचार जानने के बाद अब हम देखेंगे कि स्वयं श्रीराम का अपने बारे में क्या विचार है? युद्ध के बाद श्रीराम सीताजी से कहते हैं-

या त्वं विरहितां नीता चलचित्तेन राक्षसा। दैव सम्पादितो दोषो मानुषेण मया जितः।। (युद्ध. ११५/५)

अर्थात् हे सीते ! चंचल चित्त राक्षसों ने तुम्हारा अपहरण कर लिया था। उस देव सम्पादित दोष को मुझ मनुष्य के द्वारा जीत लिया गया। वे आगे सीता से कहते हैं -

यत्कर्त्तव्यू मनुष्येण धर्षणा प्रतिमार्जिता। तत्कृतं रावणं हत्वा मयेदं मानकांक्षिणा।। (युद्ध - ११५/१३)

अर्थात् मान की इच्छा रखनेवाला मैं रावण का वध करके मनुष्य सुलभ प्रवृति अपमान का बदला मैंने ले लिया।

सीता के प्रति श्रीराम के उपरोक्त वचनों से भी यह बात सिद्ध होती है कि श्रीराम मनुष्य ही थे और इसीलिए वे बार-बार अपने को मनुष्य कहते हैं साथ ही उपरोक्त वचनों से यह भी स्पष्ट है, कि बदले की भावना जैसी मानवीय कमजोरियाँ भी उनमें थी, जिसे वे स्वयं स्वीकार करते हैं। आगे युद्धकांड (११७/११) में भी वे अपने को दशरथ का पुत्र और मनुष्य ही कहते हैं। 'आत्मानं मानुषं मन्ये राम दशरथात्मजम्। हम पहले ही युद्ध कांड (१०१/१६) देख चुके हैं कि वे कर्मफल सिद्धान्त और पुनर्जन्म की अवधारणा को मी मानते हैं। पुनर्जन्म मनुष्य (जीवात्मा) पर ही घटता है, ईश्वर पर नहीं, क्योंकि ईश्वर अजन्मा है। अतः पुनर्जन्म लेनेवाले श्रीराम मनुष्य ही हो सकते हैं, ईश्वर के अवतार नहीं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ऋषि वाल्मीकि की प्रतिज्ञा, नारद-वाल्मीकि संवाद, और रामायण के अनेक पात्र श्रीराम को मनुष्य ही सिद्ध कर रहे हैं। स्वयं श्रीराम के वचन भी श्रीराम को मनुष्य ही सिद्ध कर रहे हैं। हालाँकि इसके विपरीत वर्तमान वाल्मीकीय रामायण में यत्र-तत्र श्रीराम को ईश्वर का अवतार कहा गया है, लेकिन ये बातें वाल्मीकि की प्रतिज्ञा एवं वेद-विरुद्ध होने से प्रमाणिक नहीं मानी जा सकती और उन्हें प्रक्षिप्त (मिलावट) ही माना जाना चाहिए। इस प्रकार सभी प्रमाणों से वाल्मीकि के राम मनुष्य सिद्ध होते हैं। वस्तुतः वे एक मनुष्य ही थे, और मर्यादा का पालन करने के कारण वे मर्यादापुरुषोत्तम कहलाए। अतः उनके निर्जीव चित्र को छोड़कर उनके मानवोचित आदर्श चरित्र की पूजा करने में ही हमारा हित एवं गौरव निहित है।

मो. ०६४७०५८७३२२

युगपुरुष दयानन्द

-डॉ० विवेक आर्य

हे युगद्रष्टा ! हे युगस्रष्टा !
नवयुग नायक, युग-ऋषि महान् !
जन-जन-मानस के मान्य मुनि,
युग के युग-युग तक हों प्रणाम!
हे ब्रह्मचर्य प्रतिमा अनुपम,
हे वेदपुरुष वैदिक प्रमाण !
तुम थे वेदों से प्राणवान्
या वेद तुम्हीं से? हूँ अजान।।

हे वेदसिद्ध, हे कर्मनिष्ठ,
हे लौहपुरुष कोमल उदार !
तुम द्रवित हृदय धर्मावतार,
पीड़ित शोषित जन की पुकार।।

तेरे सद्भावों के रवि से,
ज्यों ओस लुप्त त्यों एक साथ।
क्या ऊँच-नीच क्या छूत-छात,
सब भेदभाव सब जात-पात।।

जिस ओर तुम्हारे बढ़े कदम,
समरसता की फूटी बयार।
कट गए अविद्या बन्ध विकट,
पाखण्ड कुरीति अन्ध जाल।।

शिक्षा - समानता - स्वाभिमान,
पाकर नारी लहलहा उठी।
मानवता में कोंपल फूटी,
सामाजिकता मुस्करा उठी।।

तुम मूक प्राणियों की वाणी,
विधवा की आँखों के चिराग।
तुम थे स्वराज्य प्रथमोद्घोष,
स्वातन्त्र्य-समर के रौद्र-राग।।

वैदिक संस्कृति के विमल मन्त्र,
नव-राष्ट्र-चेतना-उषा-राग।
सत्यार्थ-प्रकाशक सत्यनिष्ठ,
एकेश उपासक वीतराग।।

हे भस्मकाम पूर्णाप्तकाम,
तुम चिर-नवीन तुम चिर-पुराण।
आचरणसिद्ध आचार्यवृद्ध,
तुम दिव्य कर्म, तुम दिव्य ज्ञान।।

हे शान्तिशील! हे शन्तिदूत!
गंगा की पावन विमल धार।
आनन्दकन्द यति दयानन्द,
नत-नयन-कोटिजन नमस्कार।।

●●●

उत्तर अयन इसी तिथि को है, सविता का सुप्रवेश हुआ ।

मान दिवस का इस ही कारण, अब से है सविशेष हुआ।।

वेद प्रदर्शित देवयान का जगती में विस्तार हुआ ।

उत्सव संक्रान्ति मकर का जनता में सुप्रसार हुआ।।

तिल के मोदक, खिचड़ी, कम्बल, आज दान में देते हैं।

दीनों के दुःख दूर भगाकर, उनकी आशिष लेते हैं।।

–आर्य पर्व पद्धति (लेखक–पण्डित भवानी प्रसाद) से।

तस्माद् दशगुण ज्ञेयं रवि सङ्क्रमणे बुधाः।

विषुवेतद् दशगुणमयने तद्दशस्मृतम्।।

–शिव महापुराण –विद्येश्वर संहिता –अध्याय १५ –श्लोक–५

२२-१२ को प्रातःचर्यायें पूरी करके सभी परिवारी जन स्नानादि से निवृत्ति पाकर विधि पूर्वक सङ्कल्पोच्चार पूर्वक यज्ञ करें। सूर्य के मन्त्रों से विशेष आहुतियाँ सम्पन्न करें।सूर्य सन्दर्भ के ऐसे कुछ विशेष मन्त्र मैं यहां दे रहा हूँ। आजके दिन गुड़ तिल का यज्ञ व प्रसाद बाँटने और देशी घी युक्त खिचड़ी के भोग की अच्छी परम्परा है। कुछ मित्रों ने सूर्य सन्दर्भित विशेष मन्त्रों को जानने का अनुरोध किया है। उन सभी का बहुत बहुत धन्यवाद।

विधि विनियोग पूर्वक गायत्री मन्त्र से आहुतियाँ करें। आर्य समाज में विधि विनियोग पूर्वक मन्त्र जप (आहुतियों) का प्रचलन नहीं के बराबर है, होना चाहिए। इच्छुक जनों के लिए कुछ जानकारी दे रहा हूँ। आशा है सभी धर्म प्रेमी जन मेरे सन्देश रूपी प्रयास पर प्रसन्नता का अनुभव करेंगे।

सप्त त्वाम् हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य ।

शोचिष्केशं विचक्षण ।।

ऋग्वेद मण्डल १। सूक्त ५०। मन्त्र ८।।

उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तराम् दिवम् ।

हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ।।

ऋ. मण्डल १। सूक्त ५०। मन्त्र ११

यत्तवा सूर्य्य स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः ।

अक्षेत्रविद्यथा मुग्धो भुवनान्यदीधयुः ।।

ऋग्वेद मण्डल ५। सूक्त ४०। मन्त्र ५।।

स्वर्भानोरध यदिन्द्र माया अवो दिवो वर्तमाना अवाहन् ।

गूलहं सूर्य्यं तमसापव्रतेन तुरीयेण ब्रह्मणाविन्ददात्रिः ।।

ऋ. मण्डल ५।सूक्त ४०। मन्त्र ६।।

मा मामिमं तव सन्तमत्र इरस्या द्रुग्धो भियसा नि गारीत् ।

त्वं मित्रो असि सत्यराधास्तौ मेहावतं वरुणश्च राजा ।।

ऋ. मण्डल ५। सूक्त ४०। मन्त्र ७।।

ग्राव्णो ब्रह्मा युयुजानः सपर्यन् कीरिणा देवान्नमसोपशिक्षन् ।

अत्रिः सूर्य्यस्य दिवि चक्षुराधात्स्वर्भानोरप माया अघुक्षत् ।।

ऋ. मण्डल ५। सूक्त ४०। मन्त्र ८।।

यं वै सूर्यं स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः ।

अत्रयस्तमन्वविन्दन्नह्यऽन्ये अशक्नुवन् ।।

ऋ. मण्डल ५। सूक्त ४०। मन्त्र ९।।

शीर्ष्णः शीर्ष्णो जगतस्तस्थुषस्पतिं समया विश्वमा रजः।

सप्त स्वसारः सुविताय सूर्यं वहंति (वहन्ति) हरितो रथे ।।

ऋग्मण्डल ७। सूक्त ६६। मन्त्र १५।।

तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रमुच्चरत् ।

पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम् ।।

ऋ. सूक्त ७। मण्डल ६६। मन्त्र १६।।

(यहाँ चक्षुः का अर्थ सूर्य है।)

वण्महाँ असि सूर्य वलादित्य महाँ असि।

महस्ते सतो महिमा पनस्यतेऽद्धा देव महाँ असि ।।

ऋग्वेद मण्डल ८। सूक्त १०१।मन्त्र ११।।

वट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।

मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ।।

ऋ. मण्डल ८। सूक्त १०१। मन्त्र १२।।

सविता पश्चातात्सविता पुरस्तात्सवितोत्तरात्तात्सवितादरात्तात् ।

सविता नः सुवतु सर्वतातिं सविता नो रासता दीर्घमायुः ।।

ऋग्वेद मण्डल १०। सूक्त ३६।मन्त्र १४।।

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।

आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ।।

ऋग्वेद मण्डल १। सूक्त ११५ ।मन्त्र १।।

तन् मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षे सूर्य्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थे ।

अनन्तमन्यद्रुशदस्य पाजः कृष्णमन्यद्धरितः संभरन्ति ।।

ऋग्वेदद्व मण्डल१। सूक्त ११५।मन्त्र ५।।

आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।।

ऋग्वेद मण्डल १। सूक्त ३५ ।मन्त्र २ ।।

याति देवः प्रवता यात्युद्वता याति शुभ्राभ्याम् यजतो हरिभ्याम्।

आ देवो याति सविता परावतोऽप विश्वा दुरिता बाधमानः ।।

ऋग्वेद मण्डल १। सूक्त ३५ ।मन्त्र ३ ।।

तिस्रो द्यावः सवितुर्द्वा उपस्थाम् एका यमस्य भुवने विराषाट् ।

आणि न रथ्यममृता–धितस्थुरिह ब्रवीतु य उ तच्चिकेतत्

ऋ. मण्डल १ सूक्त ३५ । मन्त्र ६ ।।

वि सुपर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यद् गभीरवेपा असुरः सुनीथः ।

क्वेऽदानीम् सूर्यः कश्चिकेत कतमाम् द्याम् रश्मिरस्या ततान

ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त ३५ ।मन्त्र ७ ।।

अष्टौ व्यख्यत्ककुभः पृथिव्यास्त्री धन्व योजना सप्त सिन्धून् ।

हिरण्याक्षः सविता देव आगाद्दधद्रत्ना दाशुषेवार्याणि ।।

ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त ३५। मन्त्र ८ ।।

हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणिरुभे द्यावापृथिवी अन्तरीयते।

अपामीवाम् बाधते वेति सूर्यमाभिकृष्णेन रजसा द्यामृणोति ।।

ऋग्वेद मण्डल १। सूक्त ३५ ।मन्त्र ९ ।।

उपर्कृतयु १६ मन्त्र सूर्य से सम्बन्धित और अति विशिष्ठ हैं। ऋग्वेद के मण्डल १। सूक्त ४९ का देवता सूर्य ही है। ये सारा सूक्त संक्रान्तियों से जुड़े पार्विक यज्ञों में उपयोगी हैं। आदरणीय विद्वज्जन कुछ और भी विशिष्ठ मन्त्र सुझा सकें तो कृपा होगी।

इन मन्त्रों के बाद गायत्री मन्त्र (ऋषि विश्वामित्र एवं देवता सविता) और पुनः महामृत्युंजय मन्त्र (ऋषि वशिष्ठ और त्र्यम्बक रुद्रोदेवता) का विधि विनियोग पूर्वक ५,१०, १५ या २०-२० (जैसे भी आपके पास समय हो) आहुतियाँ देकर यज्ञ पूर्ण करें।

विनियोग–सीधे हाथ की हथेली में जल–चावल लेकर (पुनः बायीं हथेली पर सीधी हथेली धारे

ज्योतिष शिक्षा पाठः एकचत्वारिंशत्

मकर सङ्क्रान्ति उत्सव का मनाया जाना : विषय।

उत्तरायण (मकर माघ) सङ्क्रान्ति–'तमसो मा ज्योतिर्गमय' का महा पर्व

–आचार्य दार्शनेय लोकेश

हुए इस कोष्ठगत वाक्य को पुनः देखकर सुधारेंगे) श्रद्धा पूर्वक पाठ (विनियोग पढ़ना) करें। जिन लोगों को विनियोग पाठ नहीं करना हो वे नहीं करें।

१ गायत्री मन्त्र का विनियोग

गायत्री मन्त्र पढ़कर पुनः।..

ओ३म् अस्य गायत्री मन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषि सविता देवता निचृद् गायत्री छन्दः षड़जः स्वरः आधि–व्याधि प्रशमन पूर्वक दीर्घ आयु विपुल बल पुष्टि नैरुज्यादि सकल अभीष्ट सिध्यर्थं च सविता देवता प्रसाद प्राप्त्यर्थं गायत्री मन्त्र जपे विनियोगः।

इसके साथ ही जल को अपने सम्मुख आसन के सामने ही छोड़ दिया जाता है।अगर किसी को और अधिक मार्ग दर्शन की आवश्यकता हो तो वह भाई बहिन मुझसे विनियोग पाठ के ऑडियो की माँग कर सकते हैं।

२. महामृत्युंजय मन्त्र का विनियोग –

महा मृत्युंजय मन्त्र पढ़कर पुनः...ओ३म् अस्य महा मृत्युंजय मन्त्रस्य वशिष्ठ ऋषिः त्र्यम्बक रुद्रो देवता अनुस्टुप् छन्दः षड़जः स्वरः आधि–व्याधि प्रशमन पूर्वक दीर्घ आयु विपुल बल पुष्टि नैरुज्यादि सकल अभीष्ट सिध्यर्थं च महा मृत्युंजय देवता प्रसाद प्राप्त्यर्थं महा मृत्युंजय मन्त्र जपे विनियोगः।

इसके साथ ही जल को अपने सम्मुख आसन के सामने ही छोड़ दिया जाता है।

उस दिन के लिए (विनियोग की तरह हथेली में जल एवं अक्षत लेकर) संकल्प पाठ इस प्रकार से होगा –

ओ३म् तत्सत् श्री ब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे श्री श्वेतवाराह कल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे एकोवृन्दः सप्तनवतिकोटयः एकोनत्रिंशत् लक्षाणि एकोनपंचाशत् सहस्त्राणि शताधिकपंचविंशतितमे (१९७२९४९१२५) सृष्ट्यब्दे अशीत्युत्तर द्विसहस्रतमे (२०८०) वैक्रमाब्दे, पिङ्गल संवत्सरे उत्तरायणे शिशिर ऋतौ मासानां मासोत्तमे तपस मासान्तर्गते पौष शुक्ल दशम्यानन्तरं तात्कालिक्यां एकादश्यां तिथौ रेवती नक्षत्रे .. वसु या पूंचं ... मुहूर्ते... मकर... लग्नोदये ब्रह्मा मनु वशिष्ठ विश्वामित्र भरद्वाज कपिल कणाद पाणिनि पतंजलि गोतम व्यास जैमिनी शङ्कराचार्य दयानन्द सरस्वती महर्षिभिर्सेविते भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गते... (प्रान्त या प्रदेश का नाम उत्तराखण्ड, मध्य प्रदेश इत्यादि) प्रदेशैकदेशान्तर्गते अत्र... (जिले का नाम) जनपदस्य (... ग्राम या स्थान का नाम) ग्रामे स्थाने... (अपने गोत्र का नाम) गोत्रात् पूज्यपाद स्वर्गीय श्री ..... (अपने पूर्वज) -- महाभाग तस्य वंशधरोऽहं या वंशधराऽहं... (अपना नाम) - - - पौष एकादश्यां युक्त अस्मिन् उत्तरायण सङ्क्रान्ति वेलायां आत्मकल्याणार्थं पर्यावरणप्रदूषण अपाकर्तुं च यज्ञमिमं करोमि। (हथेली का जल छोड़ दीजिये)। पुनः करबद्ध नमस्कार मुद्रायक्त होकर –

तेन तृप्यतु यज्ञ देवः तस्मै देवाय नमो नमः।

●●●

पृष्ठ ३ का शेष.....

जो-जो हमारी अपेक्षाएं हैं। हमें क्या चाहिए ? ईश्वर क्या दे सकता है ? ये सारी बातें इन मंत्रों में सूत्र रूप में बताया गया है।

ईश्वर कैसा है ? उसका गुण-कर्म-स्वभाव कैसा है ? हम कैसे ईश्वर को प्राप्त कर सकते है ? ईश्वर की उपासना करने से क्या लाभ होता है ? क्या महत्व, उपयोगिता है ? ईश्वर की उपासना से क्या हमारी प्रयोजन की सिद्धि होती है ? ये सारी बातें जितनी सूक्ष्मता से, सरलता से, संक्षेप से इन मंत्रों में बतायी गयी है उतनी और अन्य मंत्रों में नहीं मिलती हैं।

इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह उन मंत्रों के से ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना करें। क्योंकि ऋषि लोग बुद्धिमान थे उन्होंने विशेष मंत्रों का चयन किया, ऐसे वैसे सामान्य मंत्रों को नहीं ले लिया। फिर भी प्रायः देखने में आता है एक ही एक प्रकार के मंत्रों का उच्चारण करने से व्यक्ति ऊब जाता है जैसे कि एक-एक प्रकार का भोजन करने से, एक-एक प्रकार के वस्त्र पहनने से व्यक्ति ऊब जाता है, ऐसे ही एक ही एक प्रकार के मंत्रों से भी ऊब जाता है। इसमें यह अवकाश है कि हम और भी अनेक अन्य प्रकार के मंत्रों को ले कर, जिसमें ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव अच्छी प्रकार से बताये गये हों और उन मन्त्रों में यह भी बताया गया हो कि उपासना के क्या लाभ क्या हैं? उन मंत्रों के माध्यम से भी ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना की जा सकती है, ऐसा कोई अनिवार्य नियम नहीं है कि केवल संस्कार विधि या पंचमहायज्ञ पुस्तक में बताये गये मंत्रों से ही ईश्वर का ध्यान हो सकता है अन्य मंत्रों, सूत्रों, श्लोकों, वाक्यों या शब्दों से नहीं हो सकती।

स्रोत : निराकार ईश्वर की उपासना, पृ. २९-३२,

प्रस्तुति : भावेश मेरजा,

पंजी०सं० आर.एन.आई.-२२४१/५७ -आर्यमित्र ११ एवं १८ जनवरी, २०२४ पोस्टल रजि.जी.पी.ओ. लखनऊ/एन.पी.-१४/२०१६-२१ एक प्रति ₹ ५.००

आर्य मित्र

नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०९४१२६७८५७१, मंत्री-०९४१५३६५५७६, सम्पादक-९४५१८८१९७७
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,

.....

.....

राममय लोग

–हीरालाल आर्य

लाखों वर्ष बीत जाने के बाद भी दुनिया का हर पिता चाहता है कि मेरा पुत्र हो तो श्री राम जैसा आज्ञाकारी, हर मां चाहती है कि मेरा पुत्र हो तो श्री राम जैसा मातृभक्त, सदाचारी, संस्कारी, हर पत्नी चाहती है कि पति हो तो श्री राम जैसा पत्नीव्रत, हर भाई इच्छा करता है कि भाई हो तो श्री राम जैसा, हर गुरु चाहता है कि शिष्य हो तो श्री राम जैसा, हर सेवक चाहता है कि हमारा मालिक हो तो श्री राम जैसा, हर व्यक्ति चाहता है कि हमारा राजा हो तो मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम जैसा ! हर देश चाहता है हमारा देश हो तो ''राम राज्य'' जैसा ! क्यों ? क्योंकि वह मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम संसार के सभी पुरुषों में उत्तम (पुरुषोत्तम) था, वह सत्यनिष्ठ, धर्मनिष्ठ, कर्मनिष्ठ, कर्तव्यनिष्ठ, परोपकारी, ईश्वर भक्त, धैर्यवान, सहनशील, न्यायकारी, त्यागी, तपस्वी, वेदज्ञ, विद्वान, योगी ''आर्य पुत्र'' था, वह आर्य श्रेष्ठ पुत्र सबका हितैषी था, वह मन, वचन, कर्म से सत्यवादी था, वह शांति का दूत था, वह छल कपट से दूर था, वह माता पिता के प्रति समर्पित था, वह करुणा का सागर था, वह एक आदर्श महाराजा था, वीर योद्धा था, वह सदाचारी, धार्मिक, अनेक मर्यादाओं और गुणों का स्वामी था ! फिर क्यों न सकल विश्व गुण गाये ''मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के'' ! जय श्री राम।

ईश्वर

जिसके गुण, कर्म, स्वभाव
और स्वरुप सत्य ही हैं।
जो केवल चेतनमात्र वस्तु है तथा
जो एक अद्वितीय सर्वशक्तिमान,
निराकार, सर्वत्र व्यापक,
अनादि और अनन्त आदि
सत्यगुण वाला है और जिसका
स्वभाव अविनाशी, ज्ञानी, आनन्दी,
शुद्ध न्यायकारी, दयालु
और अजन्मादि है।
जिसका कर्म जगत की
उत्पत्ति, पालन और विनाश करना
तथा सर्वजीवों को पाप, पुण्य के फल
ठीक ठीक पहुंचाना है।
उसको ईश्वर कहते हैं।

शोक समाचार

आर्य समाज कटरा प्रयागराज के पूर्व मंत्री सरस्वती देवी परमानन्द सिन्हा इंटर कालेज प्रयाग के अध्यक्ष श्री विजया नन्द सिन्हा का दिनांक १३ जनवरी, २०२४ को अकस्मात् देहान्त हो गया।

स्व. विजयानन्द सिन्हा जी उ.प्र. पावर कारपोरेशन से अधीक्षक अभियन्ता के पद से सेवा निवृत्ति के पश्चात् महर्षि दयानन्द सरस्वती की वैदिक विचारधारा के प्रचार-प्रसार के लिए कटिबद्ध थे। जिला आर्य प्रतिनिधि सभा प्रयागराज के सन् २०१५ में प्रधान पद पर भी सुशोभित रहे। प्रयागराज के माघ मेले में वैदिक दुन्दुभि नाद श्री सिन्हा जी के नेतृत्व में जोर-शोर से हुआ। उनके निधन से आर्य समाज की अपूर्णीय क्षति हुई है। जिसकी पूर्ति असम्भव है।

● आर्य समाज रसौली, बाराबंकी के पूर्व प्रधान, लोक तंत्र सेनानी व वरिष्ठ अधिवक्ता बाबू स्वामी दयाल मौर्य का गत ३० दिसम्बर, २०२३ में ९२ वर्ष की आयु में निधन हो गया।

स्व. स्वामी दयाल जी का अन्तिम संस्कार पूर्ण राजकीय सम्मान के साथ वैदिक रीति से किया गया। जिसमें अनेक गणमान्य लोग व आर्यजन आदि उपस्थित थे।

स्व. बाबू स्वामी दयाल जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन हिन्दू समाज के संगठन व सुधार हेतु अर्पित कर दिया।

आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान-श्री देवेन्द्रपाल वर्मा एवं समस्त पदाधिकारीगण दिवंगत आत्माओं की सद्गति एवं परिजनों को यह दारुण दुःख सहन करने की शक्ति देने की परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई

–डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री

दिखाया मार्ग जिसने जग में वैदिक धर्म का सच्चा,
सभी थे चल पड़े जिस पर युवा बूढ़ा हो या बच्चा।
धर्म है एक सबका मनुजता को जो सिखाता है,
दया उपकार सात्त्विक भावना मन में बढाता है।।

हृदय में भर गया उल्लास सुशियाँ सब जगह छाई।
महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई।।

किया उद्धार विधवाओं का दीनों का दरिद्रों का,
कहा शिक्षा में है अधिकार सब महिला व शूद्रों का।
नहीं है ऊँच कोई जन्म से या नीच है कोई
सुकर्मों या कुकर्मो से जनों को तोल लो भाई।।

विषमता की सभी जन-मन में जिसने पाट दी खाई।
महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई।।

अनेकों खुल गये गुरुकुल वेद संस्कृत पढ़ाने को।
महर्षि की कृपा से ज्ञान की गंगा बहाने को।।
किया है भाष्य वेदों का सरलता से बताने को।
दिया है मन्त्र जीवन को सुगमता से बिताने को।।

यहाँ अधिकार है शिक्षा में सबका भेद ना कोई।
महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई।।

लगाते भीड़ मन्दिर में पटकते पत्थरों पर सिर,
अवैदिक मूर्त्तिं पूजा में लगे रहते जहाँ फिर फिर।
ग्रहों से जो डराते भाग्य हाथों में बताते थे,
फलित ज्योतिष के काले कारनामें भी दिखाते थे।।

मिटाकर यह सभी पाखण्ड जिसने दीप्ति दिखलाई।
महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई।।

किया है भाष्य वेदों का रची संस्कार की विधियाँ,
पुराने आर्ष ग्रन्थों की हमें दी कीमती निधियाँ।
हवन सन्ध्या महायज्ञों की विधियाँ जिसने सिखलाई,
महत्ता वेद उपनिषदों की भी थी जिसने बतलाई।।

ऋणों का हम कभी भी उसके कर सकते न भरपाई।
महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई ।।

चलाकर वेद शास्त्रों की कसौटी का सरल चरखा,
मतों की सम्प्रदायों की मान्यताओं को जो परखा।
वहीं था दूरद्रष्टा सत्य के सिद्धान्त का ज्ञाता,
सही माने में भारत वर्ष का था भाग्य निर्माता।।

प्रकाशित कर दिया सत्यार्थ हम सबको समझ आई।
महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई ।।

जहाँ सब ओर गुरुडम ढोंग वा पाखण्ड छाया था,
कुतर्कों अन्धविश्वासों का जो सैलाब आया था।
महर्षि भिड़ गए सबसे सदा निर्भीक हो करके,
पुरातन बेड़ियों को काट नव-जीवन दिखा करके।।

हटा अज्ञान से सबको ज्ञान की राह दिखलाई।
महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई ।।

विदेशी दासता की श्रृंखला को तोड़ देने को,
दिया स्वाधीनता का मन्त्र जिसने भारतीयों को।
विदेशी राज कितना भी सुखद सुन्दर रहे सच्चा,
नहीं होता कभी भी किन्तु अपने राज से अच्छा।।

अमर है नाम स्वामी का न उसके तुल्य है कोई।
महर्षि श्री दयानन्द की शताब्दी दूसरी आई ।।

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक–पंकज जायसवाल भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस,
5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है–सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।